कुरुक्षेत्र

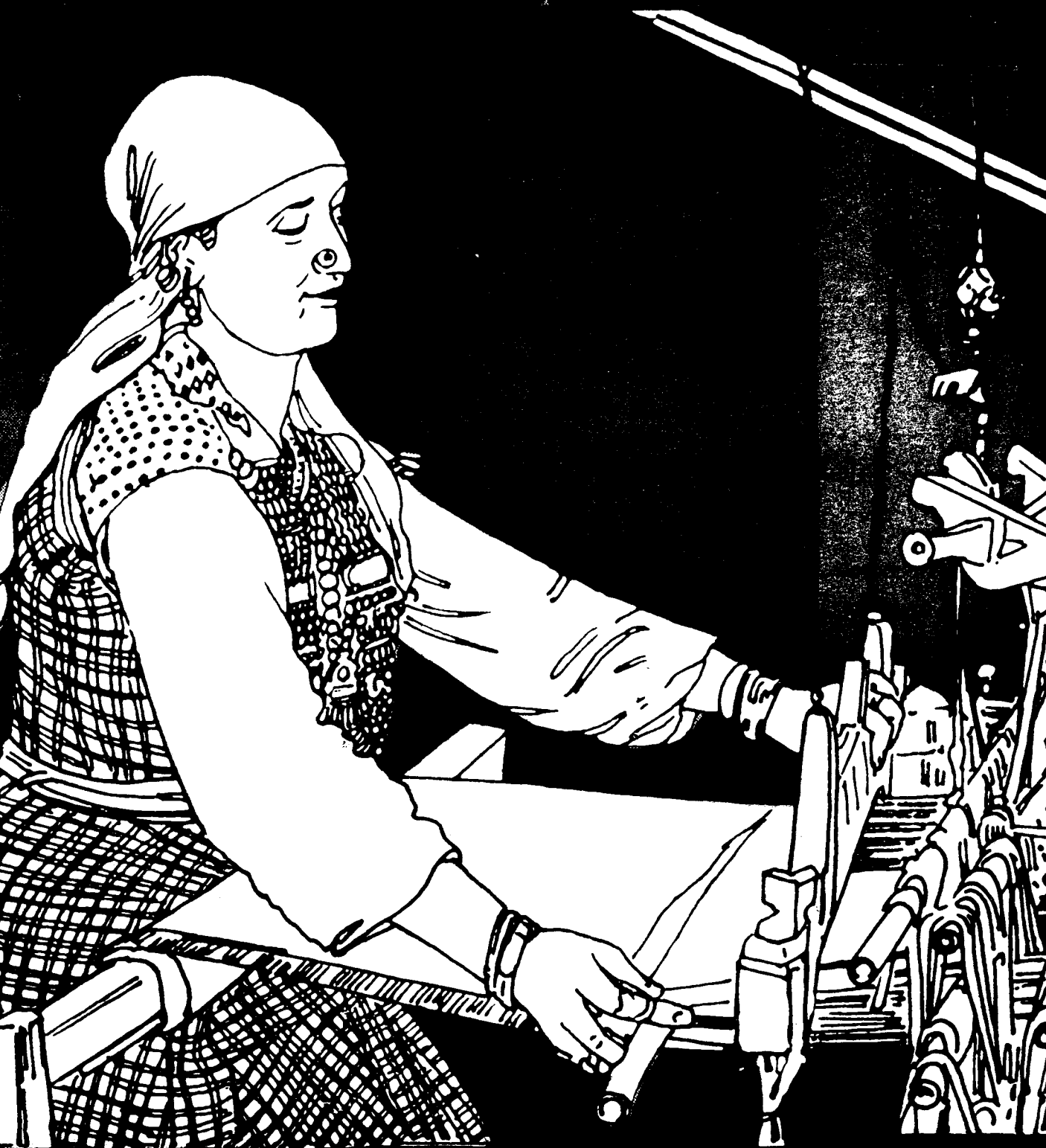

शान्तिपूर्ण परमाणु विस्फोट

भारत विश्व का पहला राष्ट्र हैं, जिसने अपना पहला परमाणु विस्फोट भूमि के अन्दर किया। यह विस्फोट 18 मई, 1974 को भारतीय समयानुसार सुबह 8 बजकर 5 मिनट पर पश्चिमी भारत में 100 मीटर से अधिक गहराई पर किया गया तथा इसमें अंतःस्फोट की प्रणाली का उपयोग किया गया।

सभी अणुशक्ति राष्ट्रों—अमरीका, सोवियत संघ, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन ने परमाणु विस्फोट के सिलसिले में परम्परागत क्रम का पालन किया अर्थात् पहले वायुमण्डल में परमाणु विस्फोट, फिर अणु-आयुधों में पूर्णता और तब भूमिगत विस्फोट।

यह विस्फोट शतप्रतिशत भारतीय प्रयास था तथा इसमें प्रयुक्त प्लूटोनियम भारत में ही तैयार किया गया था। इसके लिए अलग से कोई बजट-व्यवस्था नहीं की गई थी तथा इसको अनुसन्धान व विकास के निर्धारित बजट में ही पूरा किया गया। इस परीक्षण के लिए न तो विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ी और न ही किसी अन्य देश का सहारा लेना पड़ा।

प्लूटोनियम और विख डन (फिशन) को पूर्णतया भारतीय तकनीक के उपयोग से किया गया। यह शान्तिपूर्ण परमाणु विस्फोट चट्टानों से सम्बन्धित गति विज्ञान तथा नहरें, जलाशय आदि के निर्माण में परमाणु विस्फोट के उपयोग के बारे में अध्ययन करने की दृष्टि से किया गया।

इस परीक्षण का एक और उद्देश्य कमी वाले क्षेत्रों में पृथ्वी के गर्भ में छिपे गैस और तेल को ऊपर की ओर लाने की सम्भावनाओं का अध्ययन करना भी था। परमाणु विस्फोटों में अन्य तरीकों की अपेक्षा इस दिशा में काफी सहायता मिलती है।

अंतःस्फोट प्रणाली में एक पात्र में प्लूटोनियम के कई टुकड़े एक-दूसरे से अलग करके रखे जाते हैं। रासायनिक विस्फोट द्वारा इन टुकड़ों को साथ-साथ लाते हैं जिससे एक विस्फोटक पिण्ड बन जाता है जो परमाणु विस्फोट के लिए आवश्यक होता है।

परमाणु बम और परमाणु साधन में अन्तर है। परमाणु बम का उद्देश्य विनाश होता है। अतः इसमें रेडियोधर्मिता को नियमित करने का प्रयत्न नहीं किया जाता जबकि परमाणु साधन शान्तिपूर्ण उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जाता है तथा इससे निकलने वाले सभी रेडियोधर्मिता तत्व रोकने के हर सम्भव प्रयास किए जाते हैं।

विस्फोट के एक घण्टे बाद ही परिक्षण स्थल की भूमि से 30 मीटर ऊंचाई पर हेलीकाप्टर से की गई जांच से पता चला है कि विस्फोट के परिणामस्वरूप कोई उल्लेखनीय रेडियोधर्मिता नहीं पाई गई है। परीक्षण के डेढ़ घंटे बाद ही वैज्ञानिकों का एक दल परीक्षण स्थल के 300 मीटर समीप तक पहुचा।

भारत परमाणु ऊर्जा के शान्तिपूर्ण उपयोगों पर ही ध्यान केन्द्रित कर रहा है। यह विस्फोट अनुसन्धान व अध्ययन के उद्देश्यों से ही किया गया था। भारत परमाणु ऊर्जा के शान्तिपूर्ण उपयोग के प्रति वचनबद्ध है। □

"बरखा आई"

जहीर कुरेशी

जाग उठा खेतों में जीवन,
श्रम-पुत्रों ने ली अंगड़ाई।
बरखा आई, बरखा आई!

मौसम बदला, जीवन बदला,
फिर श्रम करने के दिन आए।
फिर खेतों की ओर चल पड़े।
हल, किसान, बैलों के साए।

खेतों में फिर शुरू हो गई
नवोल्लास के साथ जुताई।
बरखा आई, बरखा आई!

धरती ने पोशाकें बदलीं,
तरुओं पर नव-पल्लव छाए।
गांवों में फिर नृत्य, गीत
और धूमधड़ाकों के दिन आए।

बंसी की मीठी तानों ने
पुनः कृष्ण की याद दिलाई।
बरखा आई, बरखा आई!

शीतल-शीतल पवन-झकोरे
बहं गीत गाते आषाढ़ के।
फिर नदियों पर यौवन आया,
फिर से दिन बदले पहाड़ के।

फिर कोयल ने गीतों की
पुस्तक खोली, गूंजी अमराई।
बरखा आई, बरखा आई!

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के दो ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने या पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक 'कुरुक्षेत्र' (हिन्दी), कृषि मन्त्रालय, 467 कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 382406

एक प्रति 50 पैसे ● वार्षिक चन्दा 5.00 रुपए

सम्पादक :
पी० श्रीनिवासन
स० सम्पादक :
महेन्द्रपाल सिंह
उप सम्पादक :
त्रिलोकीनाथ
आवरण पृष्ठ :
नागेन्द्र चन्द्र भट्टाचार्य

कुरुक्षेत्र

वर्ष 19 आषाढ़ 1896 अंक 9

इस अंक में

	पृष्ठ
शान्तिपूर्ण परमाणु विस्फोट	आवरण II
बरखा आई (कविता)	आवरण II
जहीर कुरेशी	
ऊर्जा नीति और सामाजिक लक्ष्य	3
डा० नरोत्तम शाह	
पंजाब की जमालपुर अवाना पंचायत	4
आशाराम प्रेम	
नई गेहूं नीति	5
आर० एन० चोपड़ा	
अराजकता का यह नंगा नाच क्यों ?	7
युवा पीढ़ी की दृष्टि में पंचायती राज संस्थाएं	9
सुरेन्द्र कुमार 'मधुकर'	
कर्मचारी प्रशासन और सहकारिता	12
बी० पी० श्रीवास्तव	
खेती की उपज बढ़ाने में मधुमक्खियों का योगदान	13
डा० बी० वी० देवदीकर	
आनन्द सहकारिता की सफलता का ज्वलन्त प्रमाण	14
कृष्ण कुमार	
दिल्ली प्रदेश में सहकारिता के बढ़ते चरण	16
अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार	
पोषाहार की नई दिशाएं	18
बुद्धप्रिय मौर्य	
व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम की संगोष्ठी	18
त्रिलोकी नाथ	
पुस्तक रचनाओं का विवरण	19
विजय कुमार कोहली	
सहकारी आन्दोलन और उसकी समस्याएं	21
जगदीश शरण गुप्ता	
भारतीय किसान की ऋण समस्या एवं समाधान	22
राधेश्याम शर्मा	
श्रम के हाथ (कविता)	24
डा० देवेन्द्र आर्य	
उन्नत कृषि एवं पशुपालन में प्रसार सेवा का महत्व	25
एम० फहीम उद्दीन	
खाद्य पदार्थों में मिलावट का पता लगाएं	27
नरेन्द्र अवस्थी	
मत्स्य उद्योग विकास की ओर	28
विनोद कुमार मिश्र	
साहित्य समीक्षा	29
गंगाशरण शास्त्री, विश्व भूषण कृष्ण, मदन 'विरक्त'	
पढ़ाई दो दरजे की (कहानी)	31
शीतांशु भारद्वाज	
पहला सुख निरोगी काया	33
राजवैद्य श्रीधर शर्मा	

परीक्षा की कसौटी पर

गत वर्ष गेहूं के थोक व्यापार को सरकार ने अपने हाथ में लिया और इस वर्ष फिर उसे व्यापारियों के हाथ में दे दिया। इसका एक कारण तो यह है कि गत वर्ष गेहूं की वसूली का जो लक्ष्य रखा गया था वह पूरा नहीं हुआ। दूसरे, अनाज व्यापारियों के संगठन ने यह आश्वासन दिया कि यदि उन्हें भी गेहू का व्यापार करने का हक हासिल हो तो गहूं की वसूली की लक्ष्यपूर्ति में वे सरकार को अपना पूर्ण सहयोग देंगे। वैसे तो भारत सरकार ने राज्य सरकारों से सलाह लेकर ही खाद्य नीति में परिवर्तन किया है और आशा थी कि इससे गेहूं की वसूली के काम में व्यापारियों का पूरा पूरा सहयोग मिलेगा पर, देश के पांचों गेहूं-राज्यों में गेहूं की वसूली की गति बड़ी धीमी है और विभिन्न राज्यों से प्राप्त समाचारों के अनुसार अब तक सिर्फ 20 लाख टन गेहूं ही वसूल किया जा सका है जबकि पिछले वर्ष इसी अवधि में इससे दुगुना गेहूं वसूल किया गया था। चूंकि पिछले वर्ष भी वसूली अच्छी नहीं थी, इसीलिए सरकार को अपनी खाद्य नीति बदलने के लिए विवश होना पड़ा।

नई खाद्य नीति के अनुसार व्यापारी जितना गेहूं खरीदेंगे उन्हें उसका आधा भाग नए वसूली मूल्यों (105 रु० प्रति क्विण्टल) पर सरकार को देना होगा और शेष भाग को वे खुले बाजार में बेच सकेंगे। ख्याल था कि खुले बाजार में गेहूं के मूल्य 150 रु० प्रति क्विण्टल से ऊंचे नहीं चढ़ेंगे पर इसके विपरीत आज अनेक बाजारों में गेहूं का प्रति क्विण्टल मूल्य 200 रु० से भी अधिक है। असम, उड़ीसा तथा त्रिपुरा जैसे राज्यों में तो खाद्य संकट की स्थिति आ पहुंची है।

इस दुःखद स्थिति का कारण मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति है। बड़ा किसान और व्यापारी दोनों ही इस प्रकृति के शिकार हैं। दोनों ने आपस में साठ गाठ कर रखी है। बहुत से व्यापारियों ने गरीब किसानों की खड़ी फसल को पहले ही खरीद लिया था। बड़े किसान अपनी उपज को घरों में दबा कर बैठ गए हैं और यदि वसूली में थोड़ा बहुत देते हैं तो पुराना पड़ा हुआ सड़ागला गेहूं देते हैं। इसके अलावा, ऊंची कीमतों पर कमी वाले राज्यों को लुकछिप कर भी गेहू भेजा जा रहा है। यदि यही स्थिति रही तो आगे आने वाले समय में और भी हालत बिगड़ेगी और कानून तथा व्यवस्था को कायम रखने के भी लाले पड़ जाएंगे। यह ठीक है कि स्थिति का सामना करने के लिए सरकार ने बाहर से सस्ते मूल्यों पर गेहूं मगाने की व्यवस्था की है पर, हमारी नई खाद्य नीति तभी सफल हो सकती है जबकि उसे सख्ती से अमल में लाया जाए। यह परीक्षा की कसौटी पर है और देखते हैं कि कहां तक सफल होती है।

इसको सफल बनाने की दिशा में उत्तर प्रदेश सरकार ने कुछ सराहनीय कदम उठाए हैं। जहां उसने किसानों के लिए उनकी उपज का ऊंचा मूल्य निर्धारित किया है वहां वसूली का लक्ष्य साढ़े सात लाख टन रखा है। उसने उत्पादकों, थोक व्यापारियों तथा खुदरा व्यापारियों के अधिक स्टाक की मात्रा घटा दी है। राज्य के गेहूं उत्पादक 28 जिलों में बड़-छोटे अधिकांश अफसरों को वसूली के काम पर लगा दिया गया है। सभी बड़े उत्पादकों की सूची बना ली गई है। जहां अब तक केवल 45 हजार टन की वसूली हुई है वहां अब राज्य सरकार का इरादा जून तक साढ़े सात लाख टन के लक्ष्य की पूर्ति करने का है। पर, यह लक्ष्य तभी पूरा हो सकेगा जब राज्य सरकार के तमाम अधिकारी पूरी निष्ठा और ईमानदारी से कार्य करें। जरूरत इस बात की है कि अन्य राज्य भी इस दिशा में उत्तर प्रदेश सरकार का अनुसरण करें।

महेन्द्रपाल सिंह

ऊर्जा नीति और सामाजिक लक्ष्य

डा० नरोत्तम शाह

परमाणु ऊर्जा के अध्यक्ष डा० एच०एन० सेठना ने तेल संकट और हमारे सामाजिक लक्ष्यों के सन्दर्भ में देश की ऊर्जा नीति पर पुनर्विचार करने का सुझाव दिया है। उन्होंने आगामी वर्षों के लिए नीति की रूपरेखा भी प्रस्तुत की है। अतः यदि हम अपनी ऊर्जा नीति को सामाजिक लक्ष्यों के अनुरूप बनाना चाहते हैं तो हमें उस पर पुनर्विचार अवश्य करना पड़ेगा।

देश के सामाजिक लक्ष्य को एक साधारण वाक्य में व्यक्त किया जा सकता है – समाज के कमजोर वर्गों का जीवन स्तर कैसे सुधारा जाए? देश की कुल जनसंख्या का एक बड़ा भाग यही वर्ग है। ऊर्जा नीति समाज के गरीब वर्ग के लोगों के उत्थान में किस तरह से सहायक होती है? इस दृष्टि से देखने पर यह समस्या अपेक्षाकृत सरल हो जाती है क्योंकि इस देश की जनता ने अपने दैनिक जीवन में परिष्कृत ऊर्जा साधनों पर कभी भी भरोसा नहीं किया।

आज भी, लाखों घरों में मिट्टी के दिए जलते हैं और लाखों घरों में चूल्हों में कंडे सुलगाए जाते हैं। शहरी लोग, हिन्दुस्तानी और विदेशी, जब इस बात का मजाक उड़ाते हैं कि गोबर को ईंधन में इस्तेमाल करके बरबादी की जा रही है, तब शायद ये लोग उन शहरियों पर ही हंसें। तेल संकट की परिस्थितियों में भारत के परम्परागत तरीके ही राहत दे रहे हैं।

लेकिन, यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि सभ्यता की गति कभी रुकती नहीं। हमारे लोगों को अपना जीवन सुखी बनाने के लिए अधिक से अधिक सामान व सम्पत्ति चाहिए। हाल के वर्षों में देश में प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत के आधार पर ही इसकी प्रगति आंकी गई है।

शक्ति का मतलब तेल व तेल उत्पादों से है और आयोजन के विगत 25 वर्षों में इस देश के अधिकांश लोगों ने जलाने और भोजन पकाने में मिट्टी के तेल का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इससे पता चलता है कि रहन-सहन के स्तर काफी ऊंचे उठे हैं। और जहां तक ग्रामीण जनता का प्रश्न है, असली समस्या उन्हीं की है।

यह जरूरी है कि ऊर्जा संकट की समग्र समस्या पर सापेक्ष दृष्टि से विचार किया जाए। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि आय और धन के वितरण की तरह ही भारत में ऊर्जा की खपत भी ज्यादातर शहरी क्षेत्रों में ही है।

देश का विशाल सार्वजनिक परिवहन तन्त्र तथा भारी तादाद में जो निजी कारें हैं, वे शहरी लोगों की जरूरतें ही पूरी करती हैं और जब भी कभी पैट्रोल या डीजल की कमी होती है तो यही लोग हैं जो सबसे ज्यादा इस कमी से प्रभावित होते हैं। खाना पकाने में गैस का इस्तेमाल केवल शहरों में ही होता है और लगता है कि देश के तीन चौथाई लोग जो गांवों में रहते हैं, उन्हें यह पता भी न हो कि खाना पकाने के लिए ईंधन के रूप में इस्तेमाल के लिए गैस भी होती है।

पैट्रोलियम उत्पादनों में कमी का असर हर किसी पर केवल एक प्रकार से पड़ता है और वह है उर्वरकों के उत्पादन में होनी वाली कमी। इस दिशा में अनेक विचारों का प्रतिपादन किया गया है और कोयले पर आधारित उर्वरक तकनीक के विकास का सुझाव देने में डा० सेठना ही पहले व्यक्ति नहीं है।

डा० सेठना ने ठीक ही कहा है कि ऊर्जा का उपयोग लोगों के रहन-सहन के व्यक्तिगत तरीकों से प्रत्यक्षतः सम्बन्धित है और इन तरीकों को बदलने में काफी समय लगेगा। सौभाग्य की बात यह है कि आयोजन, आधुनिक प्रौद्योगिकी, शिक्षा और जन संचार के क्षेत्रों में प्रगति के बावजूद लोगों के रहन-सहन के तरीकों में ज्यादा परिवर्तन नहीं आया है यद्यपि वे अन्य देशों में बेहतर जीवन के लिए आधुनिक सुविधाओं की उपलब्धि के तथ्य से अवगत हैं।

जैसा कि डा० सेठना ने कहा है भारत में आधुनिक बिजली घरों के निर्माण में सात से बारह वर्ष तक का समय लगता है इसलिए ऊर्जा समस्याओं के स्थायी समाधान के लिए हमें दीर्घकालीन योजनाओं का सहारा ही लेना पड़ेगा। उन्होंने सुझाव दिया है कि भविष्य में कुछ वर्षों तक के लिए, अर्थात् 1980 तक, तेल और गैस की सप्लाई प्रतिबन्धित कर दी जानी चाहिए। इसके अलावा पैट्रो-रसायन तथा उर्वरक उद्योगों के लिए तेल के संरक्षण के उपाय भी आवश्यक होंगे।

नई नीति की आवश्यकता

वर्तमान तेल संकट को देखते हुए दुनिया भर के लोग परमाणु ऊर्जा का व्यापारिक कार्यों के लिए उपयोग करने की सोच रहे हैं। डा० सेठना का विचार है कि इस शताब्दी के अन्त तक भारत में व्यापारिक स्तर पर चलाए जाने वाले फास्ट-ब्रीडर रिऐक्टर हों और बड़े बिजली घर हों जिनकी एक इकाई में 500 से 1000 मेगावाट तक बिजली पैदा हो सके। उनकी कल्पना है कि सभी बिजली घरों को अन्तर्क्षेत्रीय आधार पर परस्पर सम्बद्ध करके एक राष्ट्रीय ग्रिड बनाया जाना चाहिए और बाद में, सूर्य शक्ति से भी ऊर्जा के स्रोतों की खोज करनी पड़ेगी।

अभी हमारी समस्या गरीब लोगों को खाना पकाने और जलाने में मिट्टी के तेल का इस्तेमाल करने के स्थान पर वैकल्पिक साधनों का इस्तेमाल करने में मदद देने तथा रईस लोगों को परिवहन में पैट्रोल का इस्तेमाल कम करने के लिए प्रेरित करने की है। इसके लिए यह जरूरी है कि ऊर्जा के सस्ते और वैकल्पिक स्रोत ढूंढे जाएं। मिट्टी के तेल का विकल्प लकड़ी और लकड़ी का

कोयला है, लेकिन लकड़ी भी सस्ती और आसानी से नहीं मिलती। सत्य तो यह है कि लकड़ी के अभाव और इसकी बढ़ती हुई कीमतों के कारण ही लोगों ने इसके स्थान पर मिट्टी के तेल का इस्तेमाल शुरू किया। लेकिन गरीब लोगों के हितों की रक्षा के लिए यह जरूरी है कि भोजन पकाने के लिए वे मिट्टी के तेल की जगह लकड़ी के कोयले का इस्तेमाल शुरू कर दें। इसके लिए भारी पैमाने पर वनरोपण और हर गांव में छोटे-छोटे भूखण्डों में ईंधन के लिए पेड़ लगाने का कार्यक्रम शुरू करना पड़ेगा। यह कार्यक्रम ठीक अभी से शुरू किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, जहां भी सम्भव हो, गोबर गैस संयन्त्र स्थापित किए जाने चाहिए ताकि खाना पकाने, जलाने और छोटे इन्टर्नल कम्बश्चन इंजिन आदि चलाने के लिए मीथेन गैस प्राप्त हो सके। सौभाग्यवश इस दिशा में काम शुरू हो चुका है लेकिन अभी हमारे लक्ष्य बहुत छोटे ही हैं। हमें लाखों गोबर गैस संयन्त्र लगाने का लक्ष्य रखना चाहिए। इस क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के बारे में वैज्ञानिक शोध की भी आवश्यकता है।

लकड़ी, लकड़ी के कोयले और गोबर गैस पर ज्यादा बल दिए जाने का एक और लाभ यह होगा कि हमें ईंधन के ऐसे विकल्प मिल जाएंगे, जिनके स्रोत कभी समाप्त नहीं होंगे। वनों और ग्रामीण क्षेत्रों में लाखों लोगों को रोजगार भी मिलेगा जिससे हमारे सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति होगी।

जब हम पैट्रोल की खपत में कमी की बात करते हैं तभी हमें सही समस्या का सामना करना पड़ता है क्योंकि इससे समाज के सबसे अधिक मुखर वर्ग ही अधिक प्रभावित होंगे। लेकिन यदि हम एक उचित सामाजिक व्यवस्था कायम करने के अपने दावे के प्रति निष्ठावान हैं तो हमें इस तरह की बरबादी रोकनी ही होगी।

उदाहरण के लिए, ऐसा क्यों है कि हजारों कारें जो सड़कों पर दौड़ती हैं, उनमें केवल एक-एक व्यक्ति ही यात्रा करते हैं जबकि दूसरी ओर हजारों यात्री बस स्टापों पर इन्तजार करते रहते हैं और भीड़ से लदी बसों में चलते हैं? क्यों नहीं हर कोई सार्वजनिक परिवहन का इस्तेमाल करता या साइकिलों पर चलता? संक्षेप में, ऊर्जा भी एक ऐसा क्षेत्र है जहां सामाजिक न्याय स्थापित करने में हमारी निष्ठा की परीक्षा हो सकती है। □

साझे श्रम की प्रतीक

पंजाब की जमालपुर अवाना पंचायत

पंजाब में गत 1972 में जब पंचायतों के चुनाव हुए तो सरकार ने घोषणा की कि जो गांव मैत्रीभाव से सर्वसम्मति से अपनी पंचायत के सदस्यों का निर्वाचन करेगा उसे सरकार एक हजार रुपया राजस्व की विशेष छूट देगी। एक हजार रुपये का नकद अनुदान दिया जाएगा। लुधियाना जिला में जमालपुर अवाना के लोगों ने सरकार की इस घोषणा का स्वागत किया और सभी पंचायत सदस्यों को सर्वसम्मति से चुन लिया और फिर न केवल अपना पुरस्कार ही प्राप्त कर लिया अपितु यह पंचायत राज्य भर में सर्वप्रथम पंचायत घोषित हुई और उसने कार्यकुशलता में 1972-73 का सर्वप्रथम पुरस्कार भी प्राप्त कर लिया।

लोगों के जीवन स्तर को उन्नत करने के लिए पंचायत ने सरकार द्वारा दी गई सुविधाओं का संयुक्त रूप से लाभ उठाया। प्रारम्भिक स्तर पर लोकतन्त्र का इससे बड़ा उदाहरण और क्या मिल सकता है! ग्राम विकास विभाग के ब्लाक और ग्राम स्तरीय अमले के सहयोग से वर्ष के लिए ग्राम विकास तथा कृषि योजना भी बनाई गई। उसे सफलतापूर्वक लागू किया गया। सारा रिकार्ड नियन्त्रित रूप से रखा गया। अनुदानों का सम्पूर्ण और सुचारू ढंग से प्रयोग किया गया। विकास कार्यों में पक्षपात को दूर रख कर सभी पक्षों को सामने रखा गया। मिश्रित विकास कार्यों पर 34,500 रुपये, नालियों और गलियों के निर्माण पर 3,500 रु०, पुलियों के निर्माण पर 5,000 रुपये और कच्ची सड़कों के निर्माण पर 1,500 रुपये की राशि व्यय की गई। विकास पर प्रति व्यक्ति 9 रुपये खर्च आया। पंचायत ने अनेक हैंड पम्प लगवाए और पूरे समय के लिए एक भंगी रखा गया ताकि प्रांगण को साफ-सुथरा रखा जाए। जनता का सहयोग यदि राशि के रूप में आंकें, तो यह 20,000 रुपये तक जा पहुंचता है।

यह एक सचेत एवं प्रबुद्ध पंचायत है। यह अपने निजी फण्डों से अपना हाई स्कूल चलाती है। स्कूल की इमारत भी पंचायत ने बनवाई है। पंचायत एक सिलाई केन्द्र और सिविल डिस्पेंसरी भी चलाती है। गांव का अपनी इमारत में स्थित एक डाकघर है। यह ग्रामसेवक और ग्रामसेविका का भी हैडक्वार्टर है। अतः सरकार के ग्राम विकास कार्यक्रमों से अधिकाधिक लाभ उठाया गया।

पंचायत नए युग की समस्याओं से पूर्णतया सचेत है। यहां परिवार नियोजन के तरीकों को लोकप्रिय बनाया गया। यहां 1,50,000 रुपये की राशि छोटी बचतों में लाई गई तथा 280 व्यक्तियों को सेना में भर्ती करवाया गया।

पंचायत के वित्तीय साधन 30,000 रुपये वार्षिक के हैं तथा यह अपने साधनों को बढ़ाने के लिए गम्भीरता से प्रयत्नशील है। केवल वर्ष 1972-73 में पंचायत ने 1,200 रुपये मकान कर के रूप में वसूल किए। शामलात भूमि का सदुपयोग करने में संयुक्त प्रयास किए जा रहे हैं और यह शायद पहली पंचायत है जहां कोई भी सैनिक असैनिक केस दर्ज नहीं किया गया।

आज्ञाराम प्रेम

नई गेहूं नीति

आर०एन० चोपड़ा

पिछले वर्ष के आरम्भ में सरकार द्वारा घोषित नई गेहूं नीति पर कुछ विवाद शुरू हो गया है और इसके औचित्य तथा व्यावहारिक उपयोगिता पर कुछ लोग सन्देह करने लगे हैं। लेकिन इस नीति की परख पिछले वर्ष गेहूं के व्यापार के राष्ट्रीयकरण के बाद के अनुभवों के आधार पर की जानी चाहिए। पिछले वर्ष देश में गेहूं की 240-250 लाख टन पैदावार की तुलना में केवल 45 लाख टन गेहूं की वसूली सम्भव हुई जबकि लक्ष्य 80 लाख टन का था।

भारतीय खाद्य निगम और अन्य सरकारी एजेन्सियों द्वारा वसूल किए गए गेहूं के अलावा गेहूं तस्करी और अन्य गुप्त तरीकों से कमी वाले क्षेत्रों में काले बाजार में 300 रु० से 400 रु० प्रति क्विण्टल बेचा गया, जबकि सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत गेहूं बेचने की थोक दर केवल 78 रु० प्रति क्विण्टल थी जो बाद में बढ़ाकर 90 रु० प्रति क्विण्टल कर दी गई। गेहूं की वसूली 76 रु० प्रति क्विण्टल के हिसाब से की जाती थी। मांग और पूर्ति के सिद्धान्त को देखते हुए ऐसा होना "स्वाभाविक" ही था।

वसूली और काले बाजार के मूल्यों में भारी अन्तर होने से न केवल गेहूं के औसत उत्पादक बल्कि उपभोक्ता को भी बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ा। उपभोक्ता को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत राशन की दुकानों से उचित मूल्य पर आवश्यकता के अनुसार पूरा राशन नहीं मिल पाता था और अपनी आवश्यकता पूरी करने के लिए उसे काले बाजार से ऊंचे दामों पर गेहूं खरीदना पड़ता था। इसी बीच कई अन्य कारणों से सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर भी दबाव पड़ रहा था क्योंकि सरकारी डिपुओं में मिलने वाले खाद्यान्न में गेहूं सबसे सस्ता था। जो लोग मोटा अनाज खाने के आदी थे, वे भी उचित दर की दुकानों से गेहूं खरीदते थे क्योंकि खुले बाजार में मोटा अनाज गेहूं की अपेक्षा मंहगा था।

बड़े पैमाने पर जाली राशन कार्ड बनवाए गए, डिपों में मालिकों ने भारतीय खाद्य निगम द्वारा जारी किए गए गेहूं में मिलावट करना आरम्भ कर दिया और उचित दर की दुकानों पर लम्बी लाइनें देखी जाने लगीं। कमी की इस मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप आम नागरिक में असन्तोष पैदा हुआ।

गुजरात में एक समय ऐसी स्थिति पैदा हुई कि खरीफ की अच्छी फसल होने के बावजूद भविष्य में कठिन समय के लिए प्रत्येक ने, चाहे वह उत्पादक हो, चाहे व्यापारी, डिपो-मालिक या उपभोक्ता, कुछ अनाज बचा कर रखा। परिणामस्वरूप, बाजार में गेहूं की मात्रा में कमी हुई। पहली नीति के अन्तर्गत उत्पादक में कोई भी उत्साह नहीं था क्योंकि गेहूं वसूली मूल्य और कमी वाले क्षेत्रों में काले बाजार में बिकने वाले गेहूं के मूल्य में कोई संगति नहीं थी। उसे यह अनुभव होता था कि गेहूं की कीमत के बारे में सरकार ने उसे नीचा दिखाया है। इस बात की भी आशंका थी कि भविष्य में गेहूं के उत्पादन में कमी आएगी।

नई गेहूं नीति का उद्देश्य उत्पादक के लिए गेहूं का न्यूनतम मूल्य बढ़ाना (105 रुपए प्रति क्विंटल) और खुले बाजार में अधिक मात्रा में गेहूं उपलब्ध कराना है। इस नीति के अन्तर्गत उत्पादक मांग और पूर्ति के सिद्धान्त के आधार पर गेहूं के बढ़े हुए मूल्यों का लाभ भी उठा सकता है। उत्पादक अपने उत्पादन का 50 प्रतिशत गेहूं परमिट लेकर रेल द्वारा कमी वाले इलाकों में बेच सकता है।

इस नीति का उद्देश्य विभिन्न अनाजों के मूल्यों और खपत प्रणाली में संगति लाना भी है। इसके बिगड़ने से सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर बहुत दबाव पड़ा।

हमें यह भी याद रखना चाहिए कि 'वसूली' अपने आप में ध्येय नहीं है। वसूली तो उपभोक्ता को उचित मूल्य पर अनाज उपलब्ध कराने के लिए सरकार के हाथ में एक हथियार है। यदि बाजार में सामान्य बिक्री प्रणाली के द्वारा अधिकांश गेहूं की मात्रा कुछ अधिक आय वाले उपभोक्ताओं को सरकारी मूल्य से कुछ ज्यादा मूल्य पर मिल सकती है तो क्या यह आवश्यक है कि गेहूं को वसूली, भण्डारण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा वितरण जैसे 'गतिरोधों' से गुजारा जाए। इन सब प्रक्रियाओं में भ्रष्टाचार, विलम्ब और डिपुओं पर लाइनों के बारे में आलोचना की आशंका तो रहती ही है, उपभोक्ता भी अपनी पुरानी पसन्द से वंचित रह जाता है। यदि हर जगह उचित मूल्य पर अनाज मिल सके तो वैकल्पिक आवश्यक सीमा तक वसूली और वितरण की प्रणाली द्वारा कार्य चलाया जा सकता है। नई नीति का निर्माण इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया गया है।

नई नीति के बारे में कानूनी आदेश जारी कर दिए गए हैं और थोक विक्रेताओं को लाइसेंस जारी कर दिए गए हैं। हरियाणा और पंजाब राज्यों द्वारा लेवी मुक्त गेहूं को बाहर भेजने के लिए परमिट जारी किए गए हैं, लेकिन रेल हड़ताल के कारण इस गेहूं का भेजना कुछ समय के लिए रुक गया था। गेहूं की कमी वाले क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा गेहूं की कमी पूरी की जाएगी।

मुख्य अनाज डिपों में तेजी से पहुंच रहा है। इस बारे में पिछले वर्ष से तुलना करना उचित नहीं होगा क्योंकि इस वर्ष, विशेष रूप से पंजाब में, फसल लगभग 15 दिन देर से काटी गई है। मध्य प्रदेश और राजस्थान की मण्डियों में अनाज पहुंचने पर असर पड़ा है क्योंकि गेहूं के भाव बढ़ रहे हैं और लेवी प्रणाली के अन्तर्गत व्यापारी गेहूं नहीं

खरीद पा रहे हैं।

नई नीति के बारे में कोई विचार प्रकट करना बहुत जल्दबाजी होगी। पंजाब और हरियाणा जैसे अधिक पैदावार वाले राज्यों में स्थिति उत्साहवर्धक है। पिछले वर्ष की वसूली के आंकड़ों की तुलना करना गलत होगा। नई योजना के अन्तर्गत व्यापारियों के केवल 50 प्रतिशत गेहूं पर लेवी लगाई जाएगी। बाकि गेहूं परमिट के आधार पर कमी वाले क्षेत्रों में भेजा जा सकेगा। इस प्रकार गेहूं की आसानी से उपलब्धि का मूल्य पर अच्छा प्रभाव पड़ा है।

संक्षेप में, नई नीति का उद्देश्य उत्पादकों, व्यापारियों और उपभोक्ताओं में मनोवैज्ञानिक परिवर्तन लाना है। उपभोक्ता की इच्छा के अनुसार सही मूल्यों पर और अच्छी किस्म के अनाज खुले बाजार में अधिक उपलब्ध होने से जमाखोरी की मनोवृत्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। यह सर्वविदित तथ्य है कि नियन्त्रित वस्तु की अपेक्षा खुले बाजार में अधिक वस्तु पहुंचती है।

नई नीति से उत्पादन में भी वृद्धि होगी जबकि उत्पादन के एक भाग को खुले बाजार में अधिक मूल्य पर बेचने से उत्पादक को अधिक पैदावार करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा।

बाजार भाव पर नियन्त्रण के लिए अनाज का एक भाग सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अनुसार बेचा जाएगा। यह अनाज लेवी की वसूली और आयात द्वारा इकट्ठा किया जाएगा।

अन्त में, कुछ क्षेत्रों में यह कहा जा रहा है कि नई नीति से भारतीय खाद्य निगम का 'अवमूल्यन' हो गया है। ऐसा नहीं है। दूसरी सार्वजनिक वसूली एजेन्सियों की तरह गेहूं की वसूली और वितरण के बारे में निगम की गतिविधियां भले ही कुछ सीमा तक कम हो गई हों, लेकिन ऊंचे स्तर पर निर्धारित राष्ट्रीय नीतियों को, जोकि आम जनता के कल्याण से सम्बन्धित हैं, सबसे पहला स्थान दिया जाता है।

भण्डारण, विभिन्न स्थानों पर भेजने और वितरण के रूप में निगम वसूली और आयात किए गए लगभग एक करोड़ टन गेहूं की व्यवस्था करेगा। निगम के 'प्रासंगिक' व्यय में कमी आई है और कुल मिलाकर निगम की प्रतिष्ठा में वृद्धि हो रही है। इसकी विभिन्न गतिविधियों और महत्वपूर्ण कार्य के लिए इस समय दृढ़ निदेशन की आवश्यकता है।

प्रकाशन विभाग द्वारा एक और हिन्दी पत्रिका का प्रकाशन

भगीरथ

सिंचाई और विद्युत की त्रैमासिक पत्रिका

जल और विद्युत साधनों के विकास कार्यक्रमों और प्रगति के बारे में जानकारी देने के लिए राष्ट्रभाषा हिन्दी में भगीरथ पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया गया है। इस सचित्र पत्रिका में :—

इंजीनियरों और वैज्ञानिकों के लिए वैज्ञानिक लेख, विद्यार्थियों के लिए ज्ञानवर्द्धक सामग्री,
किसानों और व्यापारियों के लिए सिंचाई और बिजली की नई मशीनों और
तरीकों का विवरण तथा जनसाधारण के लिए विकास सूचनाएं
तथा रोचक और नई जानकारी प्रस्तुत की गई है।

साईज 20.5×28.5 से०मी० पृष्ठ संख्या 64

मूल्य : एक प्रति	1.50 रु०
वार्षिक	5.00 रु०
द्विवार्षिक	9.00 रु०
त्रिवार्षिक	12.00 रु०

(डाकखर्च मुफ्त)

पत्रिका मंगाने तथा विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें :

निदेशक

प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस,

नई दिल्ली-1

अराजकता का यह नंगा नाच क्यों ?

संगीनों के सामने सीना तान कर खड़े हो जाने, हंसते हुए फांसी के फन्दे को चूम लेने और संघर्षों से जूझ जाने की परम्परा हमारे देश को गौरव देती रही है। आजादी की लड़ाई में ऐसी कितनी ही घटनाएं इतिहास का रूप ले चुकी हैं। भारत मां को स्वाधीन कराने के लिए हमारे नौजवान अपने प्राण हथेली पर रख कर अंग्रेजी सिंह से टकराते रहे हैं। स्वातन्त्र्य पूर्व के कितने ही क्रान्तिकारी तथा अहिंसक आन्दोलन इसके साक्षी हैं।

मगर उन आन्दोलनों की एक दिशा थी, आधार था और उद्देश्य था। आन्दोलनों, संघर्षों का यह एक शानदार पहलू था। दूसरा पहलू—बिहार के इस तथाकथित आन्दोलन ने प्रस्तुत किया है। सच पूछिए तो इसे आन्दोलन या संघर्ष का नाम ही नहीं दिया जा सकता। आज जबकि ज्वार उतर गया है, निरुद्देश्य भटकता तूफान अपने ही दुष्चक्र में उलझ कर प्रभावहीन हो गया है। क्या इस पूरे कथाक्रम को सही रूप में समझा जा सकता है ?

आखिर क्या बिहार में हिंसा और लूटपाट की ये घटनाएं देश के लिए या किसी वर्ग विशेष की भलाई के लिए उठी थीं ? क्या वे इसलिए उठी थीं कि वे अन्याय को, गरीबी को या महंगाई को खत्म करेंगी और उसकी जगह खुशहाली और रोजमर्रा के काम आने वाली चीजों में बहुतायत लाएंगी ?

आइए क्षण भर रुकें और इस पर एक नजर डालें।

बिहार के इन दंगों को छात्रशक्ति के माध्यम से आम जनता के लिए खुशहाली लाने का एक आन्दोलन बताया गया था। मगर सच्चाई क्या थी, इसे देख कर किसी भी निष्पक्ष और जिम्मेदार नागरिक का माथा शर्म से झुक जाएगा। स्वयं छात्र इसके बारे में क्या धारणा रखते हैं, यह भी एक खास बात है। हमने पटना के एक छात्र राजेश कुमार से पूछा कि आप लोगों का यह आन्दोलन तोड़-फोड़ पर आधारित होगा, क्या इसका कोई आभास आपको पहले से था और इसके लिए कोई योजना आपने पहले ही तैयार कर रखी थी ? इस प्रश्न से क्षण भर के लिए राजेश कुमार का चेहरा कातर हो उठा।

उसने उत्तर दिया कि हमने कभी सोचा भी नहीं था कि ऐसा भी हो सकता है। दरअसल बात यह है कि "हम छात्रों ने नहीं सोचा था कि आन्दोलन इस तरह अशान्तिपूर्ण हो जाएगा। हमारा विचार था कि हम शान्तिपूर्वक अनुशासन में रह कर प्रदर्शन करेंगे, जन साधारण के सामने आने वाली तकलीफों की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट करेंगे। मगर हम सीधे-साधे छात्रों को गुमराह करके कुछ तत्वों ने नाजायज फायदा उठाया। लूट, आगजनी और हिंसापूर्ण कारवाई हुई और हम हिंसा को नहीं रोक सके।"

इसी प्रकार फ्रेजर रोड़ स्थित राजस्थान होटल के मालिक श्री सुरेश गुप्त ने बताया—यह आन्दोलन नहीं गुण्डागर्दी थी। आग लगाना, तोड़फोड़ करना—भला यह कौन सी देशसेवा की बात है ? अब देखिए, "बीस पच्चीस आदमियों ने हमारे होटल के फाटक को तोड़ दिया, अन्दर घुस आए और पैट्रोल डाल कर फाटक में आग लगानी शुरू कर दी। हम लोग कुछ नहीं बोले। सोचा जब ये लोग चले जाएंगे तो हम बुझा देंगे। थोड़ी देर बाद जब ये लोग चले गए तो हम लोगों ने आग बुझा दी। फिर दस मिनट बाद दंगाइयों का एक ग्रुप और आया और आते ही सभी चीजों-सोफा, कुर्सी और दूसरे सामान पर पेट्रोल डाल कर आग लगाना शुरू कर दिया। लोगों को आतंकित करना, अपमानित करना—बाप रे बाप यह कैसी राजनीति है ! हमारे होटल के सभी कमरे भरे हुए थे, औरतें, बच्चे सभी थे। चीख-चिल्लाहट मच गई। किसी प्रकार रस्सी डाल कर उनको ऊपर से नीचे उतारा गया। एक महिला घायल भी हो गई। अभी अस्पताल में पड़ी है। करीबन तीन-चार लाख का नुकसान हुआ।"

प्रश्न उठता है होटल में ठहरे हुए उन अबोध और निरपराध लोगों ने किसी का क्या बिगाड़ा था ? जो दूर-दूर से अपना घर-द्वार छोड़ कर किसी काम से या घूमने के लिए या आमोद-प्रमोद के लिए यहां आए हुए थे और होटल में ठहरे हुए थे उनकी जिन्दगी से खिलवाड़ करना क्या इन्सानियत का गला घोंटना नहीं है ? इससे किस तरह की राजनीतिक समस्या सुलझाई जा सकती है ?

चलिए, मंहगाई और भ्रष्टाचार रोकने की ही बात सही, तो क्या इस प्रकार की घटनाओं से मंहगाई घट जाएगी ? अजब बात है।

पत्रों पर हमला

भला पटना के समाचार पत्र भवन को आग लगाते हुए आतंकवादियों ने क्या यह स्वप्न में भी सोचा होगा कि वे कितना बड़ा घृणित कार्य कर रहे हैं ?

समाचारपत्रों को विचार अभिव्यक्ति की पूरी स्वतन्त्रता है। चाहे वे सरकार का समर्थन करें या विरोध। लोकतन्त्र में इस स्वतन्त्रता की रक्षा आवश्यक है। लोकतन्त्र ने हमें भाषण और विचार अभिव्यक्ति की जो स्वाधीनता दी है उसे प्रकाश में लाने का कितना महत्वपूर्ण कार्य करते हैं ये समाचारपत्र। काश ! यह जान सके होते वे लोग। जनता की आवाज को बुलन्द करने वाले इन समाचारपत्रों को भी नहीं बख्शा।

इमारत जलती रही

सर्चलाइट के सम्पादक श्री एस.के. राव ने बताया "सोमवार की दोपहर में एक बड़ी भीड़ ने समाचारपत्र के कार्यालय पर हमला किया। समाचारपत्र के कर्मचारियों ने भीड़ का मुकाबला किया और उसे भगा दिया। लेकिन कुछ समय बाद भीड़ और अधिक संख्या में आ गई। लगता तो यह था कि इन लोगों को आग लगाने का विशेष प्रशि-

क्षण मिला हुआ है। उन लोगों ने साइकल स्टेंड पर खड़ी सभी साइकिलों को आग लगा दी। इसके बाद मिट्टी का तेल और डीजल से भीगे चिथड़े आग लगाकर सर्चलाइट कार्यालय में फेंक दिए गए। 28 घण्टे तक इमारत जलती रही। मशीनें, समाचारपत्रों की पुरानी फाइलें और सभी कुछ आग में भस्म हो गया।"

दैनिक प्रदीप के सम्पादक श्री राम सिंह भारतीय ने कहा "मैं दफ्तर में सम्पादकीय लेख लिख रहा था, तभी एक बजे के करीब यह आवाज आई कि प्रदीप और सर्चलाइट के प्रेस पर कुछ उपद्रवी लोगों ने हमला कर दिया है और रोड़ाबाजी कर रहे हैं और आग भी लगा दी है। मैं अपनी जगह से उठकर आया तो मैंने देखा कि चारों ओर धुंआ छाया हुआ है। आग की लपटें भी उठ रही हैं। यह सब बहुत थोड़ी देर में हो गया। हिंसक भीड़ ने पटना से प्रकाशित होने वाले दो अन्य समाचारपत्रों 'इंडियन नेशन' और 'आर्यावर्त' के दफ्तर पर भी हमले किए लेकिन वहां के कर्मचारियों ने डट कर मुकाबला किया और उनका इरादा विफल कर दिया।"

एक कर्मचारी श्री कृष्ण कुमार सिंह ने बताया "11 बजे प्रेस के नजदीक कोई हजारों आदमी जमा हुए। बाद में उन लोगों ने हम लोगों को कहा कि पहले आप लोग बाहर चले आइए। जब हम लोगों ने वह हिस्सा खाली कर दिया तो लोगों ने प्रेस के निचले भाग को जलाना शुरू कर दिया। हम लोगों ने उन लोगों से बहुत रिक्वेस्ट किया कि भई आप कम से कम प्रेस तो छोड़ दीजिए। प्रेस से आप को क्या दुश्मनी है? वह नहीं माने। इसके बाद हम लोगों को उनका मुकाबला करना पड़ा। हमने उनका डट कर सामना किया और उन लोगों को यहां से पीछे हटा दिया। यह सब करीब दो तीन घण्टे तक चलता रहा।"

जब पशुओं को भी मौत के घाट उतार दिया

हिंसक भीड़ ने पशुओं को भी नहीं बख्शा। सर्चलाइट कार्यालय के पास ही एक मैदान में बंधी दो सौ भेड़-बकरियां आग में जीवित जल गईं।

भेड़-बकरियों के एक छोटे व्यापारी श्री बैजनाथ भगत ने हमें बताया---"यहां दो सौ बकरी बंधी थीं जिसमें हमारी हमारी बकरी पच्चीस थी। हम क्या कर सकते थे? आग जल रही थी। हम उन्हें निकाल नहीं सके।"

मजदूर की रोटी छीन ली

"बबुआ जिन्दगी हमारी है लेकिन अफसोस लम्बे अर्से तक काम करने के बाद भी यह रिक्शा मेरा नहीं हो पाया, मालिक को किराया देता हूं तो रिक्शा खींचने का सौभाग्य मिल जाता है।" पटना के एक रिक्शा चालक ने बातचीत के दौरान बताया।

उसने कहा कि अभी हाल में पटना में जो कुछ हुआ उसके दौरान मुझे तो अपने बच्चों की जिन्दगी बचाने के लिए भी आसमान की ओर देखना पड़ा। एक तो वैसे ही बढ़ती मंहगाई से दो जून की रोटी जुटाना मुश्किल हो गया है। इस मुसीबत से तो मैं अपनी रोजदारी कमाने से भी हाथ धो बैठा। कई दिन तक कर्फ्यू लगे रहने के कारण शायद ही किसी दिन भरपेट खाना खा सका।

लड़की को मुसीबत

अब जरा छात्राओं की सुनिए। शेखपुरा, पटना की कुमारी निर्मला 18 मार्च 1974 की सुबह रोज की तरह पटना गर्ल्स स्कूल में 'सेकेन्डरी स्कूल' परीक्षा देने गई। यह स्कूल उनके निवास स्थान से 7 किलोमीटर दूर है। जब सायंकाल को परीक्षा समाप्त हो गई तो निर्मला अपनी सहेलियों के साथ रिक्शा लेने के लिए स्कूल की इमारत के बाहर गई। सड़क पर मौत का सन्नाटा छाया हुआ था। सड़क पर न तो कोई रिक्शा था और न कोई आदमी। चारों ओर दुकानें बन्द हो गई थीं। यह सब देख सभी लड़कियां बुरी तरह डर गईं। इस बीच उन्हें यह भी पता चला कि छात्र आन्दोलन के बाद नगर भर में लूट-मार और आगजनी हुई, गोली चली और दोपहर 2 बजे से नगर भर में कर्फ्यू लगा दिया गया है। सभी लड़कियों को मानो सांप सूंघ गया। वह कई घण्टों तक स्कूल के फाटक के बाहर ही किंकर्त्तव्यविमूढ़ खड़ी रहीं क्योंकि कोई भी सवारी गाड़ी उपलब्ध न थी। कर्फ्यू का उल्लंघन करके अकेले घर चल देना भी खतरे से खाली नहीं था। उधर निर्मला के पिता, श्री बैद्यनाथ प्रसाद अपनी लड़की की चिन्ता में घर में परेशान थे। अन्त में जब उनसे नहीं रहा गया तो वे कर्फ्यू के बावजूद किसी तरह छिप कर पटना गर्ल्स स्कूल पहुंचे और अपनी लड़की को पैदल घर वापस लाए। इस प्रकार कर्फ्यू के दौरान उसका उल्लघंन करके उन्होंने अपनी और लड़की दोनों की जान भी खतरे में डाली। एक भेंट में निर्मला ने लूटमार, आगजनी और दंगे फसाद की खुलकर निन्दा की। उसने कहा हुमें इन दंगों की साफ शब्दों में निन्दा करनी चाहिए क्योंकि इनका नतीजा सैकड़ों हजारों निर्दोष लोगों को भुगतना पड़ता है।

ऊंचे नारों के साथ-साथ, पटना में जो लूटपाट, आगजनी और गुण्डागर्दी हुई वह एक काले दाग के रूप में बहुत दिनों तक याद रहेगी। देश का हर समझदार नागरिक इस प्रकार के दंगों को घृणा और उपेक्षा से ही देखता है। इसी आधार पर यह आशा तो की ही जा सकती है कि भविष्य में कहीं इस प्रकार के दंगों की पुनरावृत्ति न हो।

युवा पीढ़ी की दृष्टि में पंचायती राज संस्थाएं

सुरेन्द्र कुमार 'मधुकर'

["अगर हम हिन्दुस्तान में पंचायती राज या लोकराज बनाना चाहते हैं, तो सब लोगों को उस काम में मदद देनी है। वह हवा में से तो आता नहीं और न ही हिमालय से चलकर आता है। यह तो जनता द्वारा ही आ सकता है। जनता नींव है जिस पर हम ऊंचे-ऊंचे मकान बना सकते हैं।" —महात्मा गांधी]

आदि युग का अवलोकन करने पर तत्कालीन राजतन्त्र का चित्र स्पष्ट रूप में मस्तिष्क पटल पर अंकित हो जाता है। तब शासन व्यवस्था जनवादी न होकर व्यक्तिवादी रूप में व्याप्त थी। आम आदमी और शासक के रिश्ते को सेवक और स्वामी मानकर तय किया जाता था। इतना होने पर भी यह कह देना कि प्रजा तब पूर्ण रूप से जड़ और शून्य थी, असंगत प्रतीत होता है। लघु एवं सीमित आकार में उस समय भी ग्रामीण समुदाय को स्वायत्त शासन का अधिकार प्राप्त था। ऋग्वेद में स्पष्ट घोषणा की गई है—'साथ चलो, साथ बोलो, तुम्हारे मन उसी प्रकार एक हों जैसे तुम्हारे देवता यज्ञ के भाग को एक साथ ग्रहण करते आए हैं।' यह भाव लोकतन्त्र का संस्थापक न सही, उसका पोषक तो अवश्य ही कहा जा सकता है। महाभारत काल में गण, जाति, संघ तथा परिषद् आदि संस्थाएं पंचायत शासन प्रणाली के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। तत्कालीन सभासद मनोनीत शासक के मनमाने व्यवहार पर नियन्त्रण हेतु अंकुश के रूप में प्रयुक्त होते थे। सभा तथा गण के माध्यम से शासन की लगाम काफी रूप में प्रजा के हाथों में ही होती थी।

बौद्ध काल में भूमि के सम्बन्ध में सम्राट पंचायतों के आदेशों की अवहेलना करने में असमर्थ थे। खुली सभा में ग्रामीण विवादों को सुलझाने की प्रथा उस समय में सर्वत्र मान्य थी। मुगल काल में प्रान्तीय शासन को प्रभुसत्ता प्रदान किए जाने से पंचायती व्यवस्था कुछ बिखर सी गई। तदन्तर गोरे शासन ने पुलिसतन्त्र के माध्यम से ग्रामीण समुदाय की भावना पर कुठाराघात करके लोकतन्त्र को रौंदने के लिए यथासम्भव प्रयास किए। इसके मूल में स्वार्थ और शोषण की अनीति स्पष्ट रूपसे दृष्टिगोचर होती है। विदेशी प्रभु कदापि नहीं चाहते थे कि भारत में स्वायत्त शासन की स्थापना करके जन संगठन को शक्तिशाली बनने का अवसर प्रदान किया जाए। यही कारण है कि सन् 1802 का पंचायत विधेयक सन् 1861 में बुरी तरह असफल हुआ।

स्वातन्त्रय चेतना

दमन के प्रतिकार के रूप में स्वाधीनता संग्राम की अग्नि धधक उठी। सन् 1916 में महात्मा गांधी ने सर्वप्रथम स्वायत्त शासन के महत्व को स्वीकारते हुए बनारस में स्पष्ट शब्दों में कहा—**"स्वदेशी शासन का अन्त तक समर्थन करते हुए मैं उन सभी स्वदेशी संस्थाओं तथा ग्राम पंचायतों की ओर देखता हूं जो मुझे प्रभावित करती हैं।"** विदेशी न्यायालयों के बहिष्कार का गांधी जी का प्रयास भी पंचायत न्यायलयों के प्रसार के उद्देश्य से पूर्ण था।

स्वाधीन भारत में कल्याणकारी राज्य के सिद्धान्त को स्वीकृति मिल गई परन्तु सामाजिक न्याय तथा आर्थिक विकास के मार्ग में नई चुनौतियां उभर कर प्रस्तुत हुईं। विभिन्न कार्यक्रमों को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए जन सहयोग की आवश्यकता अनुभव की गई। भारत एक विशाल राष्ट्र है। अतएव प्रशासन को एक इकाई के रूप में चला पाना कठिन प्रतीत हुआ। एक प्रश्न प्रस्तुत हुआ कि क्या ग्राम आदमी चुनावी राजनीति तथा वोट का अंग

बनकर ही रह जाए? स्वायत्त शासन के बिना जनता लोकतन्त्र की नायक नहीं बन सकती। इसीलिए काफी वाद-विवाद के पश्चात् संविधान के अनुच्छेद 40 के अन्तर्गत घोषित किया गया कि—**"राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा उनको ऐसी शक्तियां और आधार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हैं।"** इस प्रकार करोड़ों लोगों को ग्राम सभा से लेकर संसद तक एक सूत्र में पिरोने की सम्भावना प्रगट की गई।

ढांचा

ग्राम के सभी निवासियों को वयस्कता के आधार पर सदस्य बनाकर सर्वप्रथम ग्राम सभा का गठन किया जाता है जो एक प्रधान तथा उप प्रधान का निर्वाचन करती है। इसके अतिरिक्त वह एक कार्य समिति बनाती है जो ग्राम पंचायत कहलाती है। दोनों का कार्यकाल 3 वर्ष का होता है। ग्राम सभा के प्रधान तथा उप प्रधान ही पंचायत के

भी प्रधान तथा उप प्रधान के पद पर कार्य करते हैं। पंचायतों का प्रमुख लक्ष्य ग्रामीण समुदाय को संगठित करके ग्राम गणराज्य का विकास करना है। इसके अतिरिक्त लगभग पांच ग्राम सभाओं मे मिलकर पंचायती अदालतों का निर्माण भी किया जाता है।

विकास

सन् 1952 म सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत वयस्कता के आधार पर सम्पूर्ण राष्ट्र में पंचायतों का गठन किया गया। स्कूल, सड़क, चिकित्सा, स्वास्थ्य तथा जल आदि की व्यवस्था करने के साथ ही कृषि, उद्योग, सहकारिता, ग्रामीण पुनर्निर्माण तथा कमजोर वर्गों के उत्थान के कार्य भी उसके नियन्त्रण में सौंप दिए गए। वर्तमान में समूचे राष्ट्र में लगभग 2 लाख 15 हजार पंचायतों का जाल बिछा हुआ है जिनके अन्तर्गत 98% ग्रामीण जनता विकास के पथ पर है। बिहार में 17 में से 14 जिलों में पंचायतों का गठन हो चुका है। राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र आदि विभिन्न प्रदेशों में द्रुत गति से प्रसार किए जा रहे हैं।

आवश्यकता

लोकतन्त्र को सबल बनाने के लिए तन्त्र को लोक के हाथ में सौंप दिया जाना परम आवश्यक है। परम्परावादी प्रतिनिधि प्रणाली दल के भंवर में फंस कर रह जाती है। इससे आम आदमी तथा केन्द्रीय सत्ता के बीच दूरी स्वतः हो बढ़ जाती है। इसके साथ ही बहुसंख्यक समुदाय अशिक्षा, अज्ञान और पिछड़ेपन के रोग से ग्रस्त होने के कारण सजग लोकतन्त्र के लिए उपयुक्त यन्त्र के रूप में प्रयुक्त नहीं हो पाता है। अपनी सोच विचार के पश्चात् यही आवश्यक प्रतीत होता है कि लोकतन्त्र की सफलता के लिए सत्ता के विकेन्द्रीकरण की नीति अपनाई जाए और आम आदमी को लोकतन्त्र के नाटक का नायक बनने का अवसर प्रदान किया जाए। ग्रामीण भारत ही वास्तव में भारत की आत्मा है। अतएव सत्ता की प्राथमिक इकाई के रूप में उसका सर्वोत्तम उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सच्चे लोकतन्त्र की स्थापना तभी की जा सकती है जबकि ग्रामीण समुदाय को इतनी शक्ति प्रदान कर दी जाएगी कि वह अपने निर्माण के लिए स्वतः निर्णय लेने में स्वतन्त्र हो। इस दिशा में पंचायत ही एकमात्र ऐसा साधन है जो विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। पंचायती राज न केवल एक शासन व्यवस्था है वरन् यह स्वयं मे एक जीवन पद्धति है। पंचायतों को विभिन्न स्तरों पर स्थानीय स्वशासन की इकाइयों से जोड़ कर सशक्त केन्द्र के निर्माण मे ही समूचे देश का सर्वांगीण विकास किया जा सकता है।

पंचायती राज तथा लोकतन्त्र

राष्ट्र ने अपने को समाजवादी लोकतन्त्र के ढांचे में ढालने का संकल्प किया है। सार्थक लोकतन्त्र का आरम्भ तभी माना जाता है जबकि आम आदमी अनुभव करे कि वह भी तन्त्र का एक प्रमुख अंग है तथा राज्य उसके कल्याण के उद्देश्यों से प्रेरित है। निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जबकि कार्य नीचे के स्तर से आरम्भ किया जाए। ग्राम पंचायत लोकतन्त्र के भवन की नींव है जिस पर शिखर के रूप में केन्द्र का निर्माण किया जाता है। वैसे भी राष्ट्रीय उद्देश्यों से ग्रामीण समुदाय को जोड़ने के लिए पंचायती राज ही एकमात्र माध्यम दृष्टिगोचर होता है। ग्रामों की उपेक्षा करके दलीय राजनीति का प्रसार 'ग्राम स्वराज्य हैं' के नारे को निरर्थक बनाता है। पंचायती राज स्वायत्त शासन के अन्तर्गत ग्रामों का सर्वांगीण विकास करके ग्राम जनतन्त्र की स्थापना करती है जो भारतीय परिवेश में लोकतन्त्र की पुष्टि के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इससे लोकसभा से ग्रामसभा तक और संसद से पंचायत तक प्रजातन्त्र के सूर्य की रश्मियां बिखराई जा सकती हैं। करोड़ों लोग जो केन्द्रीय शासन प्रणाली में सक्रिय योगदान देने से वंचित रह जाते हैं, पंचायती राज के द्वारा गतिशील होकर राष्ट्रीय एकता तथा लोकतन्त्र को बल प्रदान करने के लिए पर्याप्त क्षमता प्राप्त करते हैं। गांव-गांव में ग्रामसभा तथा पंचायत के व्यापक प्रसार-प्रचार से गरीब जनसाधारण भी अपनी पीड़ा तथा कठिनाइयों के निराकरण की आशा करता है।

पंचायती राज सत्ता के विकेन्द्रीकरण का प्रमुख तत्व है जिसके अभाव में लोकतन्त्र अपंग ही कहा जाएगा। इसके द्वारा प्रमुख रूप से सत्ता में स्वाधिकारवाद को समाप्त करके उसे समस्त नागरिकों में विभाजित किया जाता है। नौकरशाही इस कार्य को पूर्ण करने में पूर्णतः असफल सिद्ध हुई है। अतएव पंचायती राज के द्वारा जनता को स्वयं की चुनी हुई सरकार के हाथों में प्रशासनिक नियन्त्रण चले जाने से व्यावहारिक लोकतन्त्र का निर्माण किया जाता है। ग्राम पंचायतें जनता को स्वामी तथा नौकरशाही को सेवा के माध्यम के रूप में प्रस्तुत करती है।

नैराश्यपूर्ण स्थिति

ग्रामीण गणराज्य के आदर्श को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिए अभी तक यथास्थिति पर सशक्त प्रहार नहीं हो सका है। समुदाय के विभिन्न वर्गों के स्वार्थ और उनकी आपाधापी संघर्ष का वातावरण उत्पन्न करती है। जातिवाद, सम्प्रदायवाद आदि ने ग्रामीण राजनीति में विष वमन कर रखा है। अधिकांश पंचायतों में स्वतन्त्रता के पच्चीस वर्ष बाद भी बड़ी जाति का छोटी जाति पर प्रभुत्व कायम है।

बाधाएं:—

पंचायत राज के मार्ग में निम्न अवरोध सक्रिय दिखाई पड़ते हैं:—

(क) ग्रामीण समुदाय म अशिक्षा, परम्परा एव रूढ़ि की व्यापकता उसकी क्रियाशीलता को नियन्त्रित करती है।

(ख) जातीय विभाजन सामाजिक लक्ष्यों का प्रत्यक्ष विरोधी है।

(ग) सर्वसम्मत चुनाव का नाटक तथा समय पर चुनाव न होने से ग्रामीण जनता का विश्वास इन संस्थाओं से हट सा गया है।

(घ) निर्वाचन गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा न किए जाने से आपसी शत्रुता तथा वैमनस्य का बीजारोपण होता है।

(ङ) राजनैतिक दलों ने ग्रामीण राजनीति में स्वार्थी तथा पेशेवर राजनीतिज्ञों को बढ़ावा देकर ग्रामीण संगठनों की एकता को विखण्डित किया है।

(च) आर्थिक रूप में पिछड़ी होने के कारण पंचायतें अनुदान प्राप्त करने के लोभ में राज्य की एजेन्सी मात्र बनकर रह गई हैं।

(छ) उचित निर्देशों के अभाव में पंचायतें नियमानुकूल संचालन नहीं कर पाती हैं।

(ज) पंचायत अधिकारी तथा गैर अधिकारी कर्मचारियों के सम्बन्धों में दृढ़ता एवं निकट सम्पर्क का अभाव है।

(झ) नवयुवक पंचायतों के कार्यों में बहुत ही कम संख्या में अवसर प्राप्त कर पाते हैं।

इनके अतिरिक्त ग्रामसभा भवनों की कमी, सेवाओं की अनियमितता, कर-संग्रह की ढीली नीति, गांव सभा की देख-रेख का अभाव तथा पर्याप्त कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति न होना आदि अनेक ऐसे कारण हैं जिनसे पंचायतों की विफलता सिद्ध होती है।

सुझाव

(1) पंचायतों में अच्छे नेतृत्व को अवसर प्रदान किए जाएं।

(2) ग्राम सभा में ग्राम स्तरीय कर्मचारी नियुक्त किए जाएं जो वैतनिक रूप में कार्यालय कार्य तथा कृषकों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सहायता कर सकें।

(3) हिसाब-किताब का समय विशेष पर निरीक्षण किया जाना चाहिए।

(4) एक ठोस कार्यक्रम निर्धारित किया जाए जो ग्रामीण समुदाय की चहुंमुखी आवश्यकताओं का प्रतीक हो।

(5) लगभग दस ग्रामसभाओं को मिलाकर एक ग्राम पंचायत बनाई जाए ताकि ग्रामीण संगठन में निकट सम्पर्क तथा एकरूपता लाई जा सके।

(6) ग्रामों को आत्मनिर्भर तथा विकासोन्मुखी बनाने के लिए उत्पादन वृद्धि तथा लघु उद्योगों का प्रसार किया जाना चाहिए।

(7) सहकारिता को सफल बना कर रोजगार के अवसर उपलब्ध करा कर तथा पिछड़ेपन को समाप्त करने के साथ ही साथ ग्रामों का पुनर्गठन तथा पुनर्निर्माण किया जाना चाहिए।

(8) गुप्त मतदान प्रणाली को अपनाकर जातीय वैमनस्य पर नियन्त्रण किया जाए।

(9) न्याय पंचायतों का क्षेत्र विस्तृत करके अदालती दौड़-धूप में कमी की जाए।

(10) प्रशासन तथा योजना निर्माण के पूर्ण अधिकार पंचायतों को सौंप दिए जाने आवश्यक हैं। राज्य अधिकारी निर्देशन मात्र का कार्य करें।

(11) ग्रामीण उद्देश्यों को राष्ट्रीय लक्ष्यों से जोड़ कर राष्ट्र की चहुंमुखी प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया जाना वांछनीय है।

(12) आर्थिक रूप से मजबूती के लिए कर-संग्रह तथा उसके व्यय की छूट के साथ ही उन्हें समुचित आर्थिक अनुदान दिया जाए।

(13) ग्रामीण समुदाय में आधुनिकीकरण का प्रसार कराया जाए।

वास्तव में देखा जाए तो सत्ता को जनता में विभाजित करने के लिए पंचाराज सर्वोत्तम साधन है यदि ईमानदारी, और निष्ठा से इसका विकास किया जाए।

□

एम० ए० (हिन्दी)
जे० वी० जैन कालेज
सहारनपुर (यू० पी०)

पांचवी योजना में नए छोटे कारखाने

पांचवीं पंचवर्षीय योजना में एक लाख 60 हजार नए छोटे कारखाने खोलने का प्रस्ताव है। इनमें लगभग 16 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा। इनमें से लगभग 10 लाख व्यक्तियों को नए छोटे कारखानों में तथा 6 लाख व्यक्तियों को वर्तमान उद्योगों में रोजगार मिलेगा। नए कारखाने खोलने तथा वर्तमान कारखानों के आधुनिकीकरण और विस्तार पर 1,750 करोड़ रुपए अतिरिक्त पूंजी लगाने का अनुमान है।

इस समय देश में 4 लाख से भी अधिक छोटे कारखाने हैं तथा इनमें देश के 45 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ है। 1971-72 में लघु उद्योग क्षेत्र के कारखानों में लगभग 6,249 करोड़ रुपए मूल्य की वस्तुओं का उत्पादन हुआ।

पांचवी योजना में विभिन्न लघु उद्योग कारखानों के विकास कार्यक्रमों का प्रमुख लक्ष्य गरीबी और खपत के स्तर की असमानता को दूर करना, अतिरिक्त और पर्याप्त उत्पादक रोजगारी के अवसरों को बढ़ाना तथा कार्यकुशलता में सुधार लाना है। इसके अलावा, जनसाधारण के उपयोग की कुछ आधारभूत और आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ाने के लिए पुनः नए सिरे से कार्यक्रम तैयार करना तथा निर्यात के लिए अधिक से अधिक उत्पादन करने का प्रस्ताव है।

□

कर्मचारी प्रशासन और सहकारिता

बी० पी० श्रीवास्तव

किसी भी व्यवसाय में कर्मचारी प्रशासन एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कर्मचारी की कार्यक्षमता तथा निपुणता अन्य कारणों के साथ इस बात पर भी निर्भर करती है कि दक्ष एवं निपुण होने के लिए प्रशासन का क्या रुख है।

प्रत्येक व्यवसाय में चाहे निजी हो अथवा शासन या सहकारिता के माध्यम से चलाया जा रहा हो-- पूंजी एवं श्रम का सम्मिश्रण रहता है। किसी भी रूप में पूंजी लगाने वाले प्रशासनकर्त्ता बन जाते हैं तथा उन्हें अपने व्यवसाय को चलाने के लिए श्रम इकट्ठा करना पड़ता है। यह श्रम ही कर्मचारी के रूप में सामने आता है। निजी व्यवसाय का उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना होता है, जिस हेतु कच्चा माल एवं कर्मचारियों पर कम से कम व्यय करने तथा तैयार माल की अधिकतम कीमत प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। सहकारी संस्था का उद्देश्य अपने सदस्यों की अधिकाधिक सेवा करने के लिए कर्मचारियों की नियुक्तियां करना होता है। अतएव संस्था का उद्देश्य कुछ भी हो किन्तु निजी व्यवसाय के समान ही सहकारिता के क्षेत्र में भी कर्मचारी प्रशासन एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

कोई भी संस्था कभी भी उन्नति नहीं कर सकती यदि उसके कर्मचारियों में असन्तोष है तथा संस्था के प्रति आत्मीयता की भावना नहीं है। सहकारिता के क्षेत्र में यह और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इस क्षेत्र में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कर्मचारी स्वयं ही सेवा करते हैं। सहकारी व्यवसाय में भी आए दिन हड़ताल, नारेबाजी आदि होती रहती है तथा प्रशासन कर्मचारियों के विरुद्ध रुख अपनाता है। इस हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत है :

(1) सहकारी संस्था के सदस्यों को अधिकाधिक लाभ पहुंचाने के लिए ही कर्मचारियों से कार्य कराया जाता है। इससे प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कर्मचारी ही लाभान्वित होते हैं। प्रत्येक कर्मचारी को प्रशिक्षण द्वारा अथवा अन्य किसी प्रकार से इस जानकारी का दिया जाना आवश्यक है कि वह किसी विशेष प्रकार के कार्य को क्यों करता है, उससे उसका अन्तिम लाभ में क्या हाथ है तथा उससे वह किस प्रकार लाभान्वित होता है। इस जानकारी से कर्मचारियों में कार्य के प्रति रुचि का जागरण होगा।

(2) प्रशासन को कर्मचारियों से अलग नहीं समझना चाहिए। प्रशासन बोर्ड में कर्मचारियों के एक प्रतिनिधि को रखा जा सकता है। इससे कर्मचारियों में यह विश्वास होगा कि वे स्वयं प्रशासक भी हैं तथा प्रशासन के समय आने वाली कठिनाइयों से कर्मचारी अवगत रहेंगे। इसे ब्रिटेन के समान ज्वाईंट कन्सल्टेशन कमेटी या फ्रांस की वर्कस कमेटी जैसा रूप दिया जा सकता है।

(3) कर्मचारियों की कठिनाइयों को समझने तथा हल करने के लिए प्रशासन द्वारा प्रतिमाह अथवा 15 दिन में एक बैठक बुलाना आवश्यक है, इसमें एक दूसरे की स्थिति पर चर्चा कर समस्याओं का हल ढूंढा जा सकता है। इस सम्बन्ध में ब्रिटिश आन्दोलन ने कोआपरेटिव कमीशन नियुक्त किया था जिसकी अभिस्तावना है कि कर्मचारियों के प्रतिनिधियों में नियमित सम्पर्क आवश्यक है।

(4) सहकारिता के क्षेत्र में प्रशिक्षण का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। अप्रशिक्षित प्रबन्ध निश्चित रूप से असफलता की ओर जाएगा। आल इण्डिया रूरल क्रेडिट सर्वे रिपोर्ट ने प्रशिक्षण पर अपनी अभिस्तावना दी है प्रशिक्षण के लाभ को सीधे नहीं मापा जा सकता किन्तु लाभ का बढ़ना, कार्य सुचारु रूप से चलाना, लाभ के ही परिमाप है।

(5) जिस तरह निजी क्षेत्र में योजनाबद्ध तरीके से नियुक्तियां आदि होती हैं उसी प्रकार सहकारिता के क्षेत्र में अच्छे ढंग से कर्मचारी प्रशासन चलाने हेतु यह आवश्यक है कि आगे के वर्षों की योजना बनाकर उसके लिए कर्मचारी को पूर्व से ही प्रशिक्षित कर लिया जाए जिससे उचित संख्या में ठीक समय पर ठीक कर्मचारी उपलब्ध हो सकें।

इस सम्बन्ध में उच्च श्रेणी के अधिकारियों द्वारा ही निर्णय ले लिया जाता है, इस हेतु आवश्यक हैं कि निम्न स्तर के कर्मचारियों से भी योजना बनाते समय टिप्पणी मांगी जाए।

(6) प्रशासन का मुख्य कार्य सहकारिता के क्षेत्र में कार्य करने की उत्कण्ठा जाग्रत करना है। यहां पर बंगलौर में 1969 की तकनीकी सभा का निम्न अंश उल्लेखनीय है :—

प्रधान रूप से उच्च स्तर का उत्पादन एवं कार्य दक्षता प्रबन्ध एवं विशेष रूप से उच्च प्रबन्ध पर निर्भर करती है।

यह उत्कण्ठा मनोवैज्ञानिक ढंग से आर्थिक सहयोग देकर उत्पन्न की जा सकती है।

(7) प्रशासन द्वारा कर्मचारियों का चयन, उनकी पदस्थिति तथा प्रशिक्षण, पदोन्नति एवं स्थानान्तरण, अनुशासन, पर्यवेक्षण, वेतन, प्रशासन कार्य का परीक्षण, प्रोत्साहन, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा कल्याण संघ से सम्बद्ध आपसी विवादों का निपटारा आदि पर विशेष ध्यान दिया जाकर इस प्रकार का वातावरण तैयार किया जा सकता है जिससे कर्मचारियों में प्रशासन के प्रति असन्तोष की भावना न रहे।

श्री सी० एच० नार्थ काट ने कर्मचारी प्रशासन को निम्न तीन बातों पर आधारित किया है :—

(1) कर्मचारी को कानून में तथा उसके प्रयासों में न्याय प्राप्त करने का अधिकार है।

(2) कर्मचारी निष्पक्ष व्यवहार तथा अपनी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा के भागीदार हैं।

(3) कर्मचारी प्रशासन के मूल्यवान धन तथा उसके उद्गम हैं।

नार्बकाट का कथन सही है कि सहकारिता के सिद्धान्त के मूल में मानव का सामाजिक स्वभाव विद्यमान है। सहकारिता के क्षेत्र में कर्मचारी अर्थात् सामाजिक मानव का महत्व जितना अधिक है उतना अन्य क्षेत्र में नहीं है तथा इस उद्देश्य को लेकर जिस संस्था में कर्मचारी और प्रशासन के बीच मधुर सम्बन्ध होंगे उस संस्था की उत्तरोत्तर प्रगति अवश्यम्भावी है।

उपज बढ़ाने में मधुमक्खियों का योगदान

डा० जी० वी० देवदीकर

हाल ही में नई दिल्ली के 'केन्द्रीय कृषि अनुसन्धान संस्थान' में आयोजित 'मधुमक्खियों की जनसंख्या वृद्धि और कृषि उपज' नामक गोष्ठी में पूना स्थित 'केन्द्रीय मधुमक्खी अनुसन्धान संस्थान' ने इस बात पर प्रकाश डाला कि पर-संसेचित फसल अथवा स्वयं-वन्ध्या फसल के समीप मधुमक्खियों की जनसंख्या कृषि-उत्पादन में वृद्धि करने में सहायक होती है। फलों के मामले में तो वे मात्रा के साथ-साथ फलों की कोटि में भी सुधार करने में सहायक हैं।

यह सत्य है कि एक छोटा जीव होते हुए भी मधुमक्खी कृषि-उत्पादन में वृद्धि के साथ ही उसकी कोटि में सुधार करने में सक्षम है। मधमक्खियां फूलों से पुष्पासव और पुष्प-पराग के रूप में अपना भोजन प्राप्त करती हैं। फूलों से भोजन प्राप्ति की इस प्रक्रिया में वे इधर-उधर परागों का बिखराव करती हैं। यदि उनकी बस्तियों के समीप फूलों वाले विभिन्न पौधे विकसित हों, तो स्वयं-सेवक मधुमक्खियां उनमें से शर्कराधिक्य वाले पुष्पों अथवा पौष्टिक पराग वाले पौधों का चुनाव कर सकती हैं।

'मधुमक्खियां' अपनी बस्ती के विभिन्न फूलों वाले पौधों में से उस पुष्पासव वाले 'पुष्प-पदार्थों' का चुनाव करती हैं। मधुमक्खयां अपनी इस 'पुष्पगतनिष्ठा' के कारण, अति कुशल पादप-पराग संसेचक की श्रेणी में आती हैं। पुष्पासव और पुष्प-पराग सम्बन्धी उनका यह विशेषानुराग 'प्राकृतिक चयन-प्रक्रिया' की महान घटना मानी जाती है।

यद्यपि मधुमक्खियों को स्वयं-संसेचित फसल के लिए कोई श्रेय प्राप्त नहीं है, परन्तु अतीव पर-संसेचित और स्वयं-वन्ध्या फसल के मामले में कृषि उत्पादन में वृद्धि की दृष्टि से उनकी भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। मधुमक्खियों की प्रभावकारिता उनके आकार पर निर्भर है।

भारत के जीव-वैज्ञानिकों ने मधुमक्खियों की नस्ल सुधारने में सफलता प्राप्त की है और वे अधिक लम्बी जिह्वा वाली मधुमक्खियों का विकास कर पाने में सफल रहे हैं। उनका कहना है कि बड़े आकार की मधुमक्खियां प्रति उड़ान में हर बार अधिक पुष्पासव और पुष्प-पराग ढो सकती हैं। बड़े आकार और लम्बी जिह्वा वाली मधमक्खियां शहद का अधिक मात्रा में उत्पादन करने में भी सक्षम होती हैं। साथ ही, अच्छी कोटि के पुष्पासव के चुनाव की भी उनमें अधिक योग्यता होती है। अतः वे श्रेष्ठ पादप-संसेचन में समर्थ होती हैं। इसी प्रकार अमेरिका में भी विशेष फसलों के संसेचन के लिए सधुमक्खियों की सुधरी हुई नस्लों का उपयोग किया जा रहा है।

अन्य अनेक देशों में भी कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए पौधे-संसेचन में मधुमक्खियों का उपयोग किया जा रहा है। इस बात में अब कोई सन्देह नहीं कि फल के बाग लगाते समय आस-पास मधुमक्खियों की बस्ती का होना अति आवश्यक है।

निःसन्देह, फल-फूलों की कृषि में मधुमक्खियां उनकी कोटि में सुधार करती हैं। संस्थान मे किए गए परीक्षणों के दौरान अंगूर और अनार की खेती में यह बात सिद्ध हुई है। इस अनुसन्धान द्वारा कृषि के क्षेत्र में नवीन क्रान्ति की सम्भावना है।

यदि हम अन्य कृषि-उत्पादनों जैसे दलहन, तिलहन, साग-सब्जियां, फलों आदि में मधुमक्खियों का योग प्राप्त करने में सफल रहे हैं, तो मधुमक्खियों के विनाश की प्रवृत्ति को रोकने के महत्व को दृष्टि से ओझल नहीं किया जा सकता है।

आनन्द : सहकारिता की सफलता का ज्वलन्त प्रमाण

कृष्ण कुमार

एक बार एक व्यक्ति ने मुझसे पूछा—

"आप सदा सहकारिता की हिमायत करते रहते हैं, जबकि भारत में यह बुरी तरह असफल रही है। सहकारिता गांवों के गरीबों सहायता नहीं कर सकी। सहकारी संस्थाओं के पदाधिकारियों के भ्रष्टाचार को कौन नहीं जानता? बकायादारों से 40 प्रतिशत से अधिक वसूल नहीं हो सका। क्या आप एक भी ऐसी संस्था की मिसाल दे सकते हैं जो सहकारी होने के बावजूद सफल रही हो?"

मैंने कहा—"सहकारी संस्थाओं में भ्रष्टाचार है, यह ठीक है। सहकारी संस्थाएं हर गांववासी को लाभ नहीं पहुंचा सकीं, यह भी ठीक है, पर भारत में कुछेक ऐसी सहकारी संस्थाएं भी हैं जिन्होंने विदेशों तक में भारत का नाम रोशन किया है।"

"कौन सी संस्था है वह?" वह अचरज और उत्सुकता से पूछ बैठे।

"खेड़ा जिला सहकारी दूध उत्पादक संघ लिमिटेड, आनन्द, गुजरात," मैंने कहा और फिर उसे बताया कि किस प्रकार डाक्टर वर्गीज कुरियन नामक कर्मठ डेयरी इंजीनियर ने इसे सफल संस्था बना दिया। "खेड़ा की सफलता की कहानी दिलचस्प ही नहीं प्रेरक भी है। डाक्टर कुरियन ने अपनी मेहनत से छोटी सी किसानों की सहकारी संस्था को देश के 30 बड़े उद्योगों में एक बना दिया। उन्होंने दिखा दिया कि वह एशिया के गिने-चुने उद्यमियों में है। उन्होंने अद्भुत व्यापार प्रतिभा के दर्शन ही नहीं कराए, बल्कि 10 लाख किसानों के जीवन में ऐसी क्रान्ति ला दी जो एशिया के गांवों से 'गरीबी हटाने' के कार्यक्रम चलाने के लिए आदर्श सिद्ध हो सकती है।"

इस सदी के पांचवें दशक में आरम्भ में श्री कुरियन ने अपना जीवन टाटा स्टील निगम में शुरू किया जहां उनके चाचा प्रबन्ध निदेशक थे। संस्था में उनकी उन्नति की रफ्तार इतनी तेज थी कि उन्हें और उनके सहयोगियों को इससे परेशानी हुई। उन्होंने विदेश में पढ़ाई के लिए अपना प्रार्थनापत्र भेज दिया। उन्हें चुन लिया गया और वह सरकारी वजीफे पर मिशिगन (अमेरिका) राज्य विश्वविद्यालय में डेयरी इंजीनियरी का तीन वर्ष का अध्ययन करने चले गए। छात्रवृत्ति की शर्तों में यह भी शामिल था कि वह वहां से लौटने के बाद कुछ वर्ष के लिए भारत सरकार के पास काम करेंगे। लौटे तो सरकार ने उन्हें बम्बई से 256 मील दूर भैंस के दूध से पाउडर बनाने का संयन्त्र तैयार करने के लिए 'आनन्द' भेज दिया।

डाक्टर कुरियन का कार्य सरल नहीं था। आनन्द छोटा सा मुस्लिमबहुल जिला है, जबकि कुरियन ईसाई थे साथ में पंजाबी और फिर विदेश में पढ़े-लिखे। उन्होंने फैक्टरी के 'गैराज' में रहने का फैसला कर लिया और दो वर्ष यहीं रहे। यहां आराम कम थे, पर उन्हें अपनी खोज के लिए काफी समय मिल जाता था। भैंस के दूध में 8 प्रतिशत चिकनाई होती है, जबकि गाय के दूध में 4 प्रतिशत। समस्या थी - लगभग दुगुनी चिकनाई वाले दूध से पाउडर कैसे बने? आज तक किसी ने भैंस के दूध से पाउडर तैयार करने का संयन्त्र नहीं बनाया था। डाक्टर कुरियन की मेहनत रंग लाई। साल भर में ही नया संयन्त्र कार्य करने लगा।

आनन्द में सरकारी दुग्धशाला के अतिरिक्त सहकारी दूध संयन्त्र भी था। मैनेजर उन्हें रोज आकर तंग करता। उनका संयन्त्र पुराना था और रोज उसमें कोई न कोई खराबी हो जाती थी। आर्थिक तौर पर भी वह सफल नहीं था। डाक्टर कुरियन ने महसूस किया कि आनन्द की सहकारी संस्था को आधुनिक संयन्त्र और बहुत बड़े सहकारी संघ की आवश्यकता है, जिससे काफी दूध मिले और उसे बोतल में बन्द करके बम्बई पहुंचाया जाए। इसके परिवहन की व्यवस्था की भी आवश्यकता थी।

डाक्टर कुरियन का लाजमी सरकारी सेवा का समय समाप्त हुआ तो उन्होंने पद से इस्तीफा दे दिया। सहकारी दुग्ध संस्था के मैनेजर के सामने परेशानी आई कि यदि अब यन्त्र बिगड़ा तो वह किसके पास मरम्मत के लिए हाथ पसारेंगे? मैनेजर ने उनसे प्रार्थना की कि वह आनन्द में ही रह जाएं। काफी सोच-विचार के बाद उन्होंने प्रस्ताव के पक्ष में निर्णय किया।

खेड़ा जिला सहकारी दुग्ध उत्पादक संघ लिमिटेड ग्रामीण दूध सहकारी समितियों का समूह है जिसके 2,15,000 किसान परिवार सदस्य हैं। इसके कार्य-कलापों से 10 लाख से अधिक लोगों और 2,500 वर्गमील में फैले गांवों का लाभ हुआ है। दिन में दो बार 3,44,000 पशुओं का दूध 800 ग्रामीण सहकारी समितियों में लिया जाता है और 85 लारियों द्वारा एशिया के आधुनिकतम दुग्ध संयन्त्र में बोतलबन्दी के लिए पहुंचाया जाता है। रोजाना दो बार पैसों का भुगतान किया जाता है। किसानों को सुबह दिए दूध का पैसा शाम को मिल जाता है और शाम को दिए दूध का अगले दिन सुबह। प्रतिदिन लगभग 1,10,000 लिटर दूध बम्बई दुग्ध परियोजना को बिक्री के लिए भेजा जाता है। बाकी 2,15,000 लिटर से 5,000 टन घी, 500 टन पनीर और कई तरह के दूध पाउडर बनाए जाते हैं। देश में बच्चों के दूध पाउडर उत्पादन का 50 प्रतिशत से अधिक आनन्द से मिलता है। भैंस के दूध से बच्चों का दूध बनाने वाली यहां पहली फैक्टरी है। पिछले साल आनन्द ने 38 करोड़ रु० के दुग्ध उत्पादनों की बिक्री की।

डाक्टर कुरियन का कहना है कि उनकी सहकारी संस्था की सफलता का राज किसान सदस्यों की आवश्यकताओं को समझना है। किसानों और पशुपालकों की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए उन्हें कई प्रकार की सलाह, पूर्ति और सेवाएं दी

गई। 80 प्रशिक्षित 'स्टाकमैन' किसानों के पास जाते हैं और उन्हें भैंस पालन के आधुनिक तरीकों की जानकारी देते हैं। 42 पशु चिकित्सक सप्ताह में कम से कम एक बार हर गांव में जाते हैं जो संस्था के सदस्यों के पशुओं का ही नहीं, गैर-सदस्यों के पशुओं का भी इलाज करते हैं। कारण ? "हम नहीं चाहते कि गैर-सदस्यों के पशुओं से हमारे सदस्यों के पशुओं को रोग लगें। पशु के बीमार होने के चार घण्टे के भीतर ही पशु चिकित्सक की सेवाएं मिल जाती हैं। संस्था का एक पशु चिकित्सक साल में इतने आप्रेशन करता है जितने सरकारी पशु-चिकित्सक जीवन भर में नहीं करता।

सहकारी संस्था के पास 60 उन्नत भैंसे हैं जिनके वीर्य से भैंसों का कृत्रिम गर्भाधान कराया जाता है। हर गांव में गर्भाधान कराने के लिए प्रशिक्षित व्यक्ति हैं। पिछले आठ वर्ष में कृत्रिम गर्भाधान से भैंसों की दूध देने की क्षमता 50 प्रतिशत बढ़ी है। कुल दूध उत्पादन का 30 प्रतिशत किसान अपने घर में रख लेते हैं। इससे कमाई के अतिरिक्त उनका स्वास्थ्य भी सुधरता है। भैंसों को साल भर चारा उपलब्ध कराने के लिए चारा मिल लगाई गई है।

दूध उत्पादन में सफलता के बाद खेड़ा ने अन्य दिशाओं में प्रयत्न शुरू किए हैं। जल्दी ही चावल मिल चालू हो जाएगी। सोयाबीन से बच्चों के लिए पोषक खाद्य बनाने का कार्य आरम्भ हो गया है। जल्दी ही 'माल्टेड' दूध की फैक्टरी भी काम करने लगेगी। श्री कुरियन कहते हैं कि दूध उत्पादन को लाभकारी बनाने के लिए पशुपालकों के पास पशुओं की संख्या बढ़ाना आवश्यक है। बम्बई में दूध की मांग बढ़ रही है, इसलिए उपभोक्ताओं की कमी नहीं।

खेड़ा सहकारी संघ सामाजिक क्षेत्र में भी दो महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने में सहायक रहा है। एक, सामान्यतः किसान परिवारों में पशु स्त्रियों की सम्पत्ति माने जाते हैं। पहले दूध उत्पादन कम था तो सारा दूध घर में ही खप जाता था। बिक्री के लिए जरा भी दूध नहीं बचता था। आदमी खेतों पर कार्य करते थे और छः महीने बाद फसल आने पर एक मुश्त पैसा मिलता था जो जल्दी ही खत्म हो जाता था। बीच के महीनों में किसानों को रुपये-पैसे के मामले में बड़ी तंगी का सामना करना पड़ता था। अब स्त्रियों को दूध से रोजाना पैसा मिलता है जिससे किसान परिवारों की आर्थिक स्थिति तो मजबूत हुई ही है, घर में स्त्रियों की साख भी बढ़ी है।

दूसरे, जाति और वर्ग भेद कम हुआ है। जब ऊंची जाति के लोग नीची जाति के लोगों के साथ लाइन में दो बार पैसे लेने और दूध जमा कराने के लिए खड़े होंगे तब क्या वे बोले बिना रह सकते हैं ?

डाक्टर कुरियन की सफलता और भी उजागर होकर सामने आती है जब वह कहते हैं कि हमने सरकार से एक पैसे की भी सहायता नहीं ली। या तो उन्होंने अपने लाभांश को सहकारी संस्था के विकास में लगाया या अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से सहायता ली। राष्ट्र संघ बाल सहायता कोष ने बच्चों के लिए खाद्य बनाने का संयन्त्र लगाने में सहायता की। पशु-चारा संयन्त्र के लिए 18 लाख रु० दिया। यही तरीका उन्होंने देश के 10 राज्यों में 17 सहकारी दूध संयन्त्र लगाने की परियोजना के लिए अपनाया है। राष्ट्र संघ खाद्य कार्यक्रम के अन्तर्गत 42,000 टन मक्खन मिला। 1,26,000 टन दूध पाउडर यूरोप से 55 लाख डालर (1 डालर=7.60 रु०) की कीमत पर खरीदा। दोनों से 1.27 करोड़ डालर के दूध उत्पाद बनाए और 6 सहकारी संयन्त्रों के लिए पूंजी मिल गई। बाकी के लिए पूंजी उनके लाभांश से जुटाई जाएगी।

9 वर्ष पहले प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री आनन्द आए। वह संस्था की प्रगति से इतने प्रभावित हुए कि काफी रात गए तक बातचीत करते रहे। उन्होंने डाक्टर कुरियन की पीठ थपथपाई और कहा—"ग्रामीण भारत ऐसा ही बनना चाहिए।" दिल्ली लौटने पर शास्त्री जी ने डेयरी विकास निगम की स्थापना की घोषणा कर दी और डाक्टर कुरियन से उसकी अध्यक्षता सम्भालने को कहा। श्री कुरियन इस शर्त पर तैयार हो गए कि निगम का मुख्यालय आनन्द में ही रहेगा।

भारत ही नहीं, देश के बाहर भी डाक्टर कुरियन को बड़े आदर से देखा जाता है। अगले वर्ष दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय डेयरी कांग्रेस हो रही है जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त डेयरी विशेषज्ञ भाग लेंगे। डाक्टर कुरियन कांग्रेस की अध्यक्षता करेंगे। कांग्रेस का विषय है—"डेरी उद्योग सामाजिक आर्थिक परिवर्तन का माध्यम कैसे बने ?"

□

संयुक्त सम्पादक,
सेवाग्राम कृषि साप्ताहिक,
दरियागंज, दिल्ली-6

दिल्ली प्रदेश में सहकारिता के बढ़ते चरण

* अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

उन्नीस सौ सरसठ से 1972 तक का काल दिल्ली प्रदेश के एक्जीक्यूटिव वित्त कौंसिलर श्री मांगेराम के मत में सहकारी संस्थाओं की प्रगति के लिए अनुकूल नहीं था। इस कालावधि में सारे देश के समान दिल्ली प्रदेश में भी सहकारिता की प्रगति रुकी रही। परन्तु 1972 से सहकारिता ने पुनः प्रगति की दिशा में कदम बढ़ाना शुरू कर दिया है।

दिल्ली प्रदेश में इस समय लगभग 140 गृह निर्माण की सहकारी संस्थाएं हैं। घर बनाने का काम तेजी से न बढ़ने के अनेक कारण हैं, जैसे—

1. सहकारी संस्था को घर बनाने के लिए जमीन नापने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ये कुछ कानूनी हैं। जैसे इन संस्थाओं के लिए जो जमीन नक्शे में मार्क करके दी गई है, वह खाली और पड़ती नहीं पड़ी है। वहां लोग बसे हुए हैं। झोपड़ियां बनी हुई हैं या कच्चे घर बने हुए हैं। इन लोगों को यहां से हटाकर अन्यत्र बसाने की कोई योजना नहीं। यहां बसे लोगों की ही यदि गृह निर्माण सहकारी समितियां होतीं तो जमीन पर अधिकार पाने में कोई कठिनाई नहीं होती। परन्तु सहकारी संस्थाएं बाहरी तत्वों की हैं। इनका सामान्य जनता से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं। कानून के बल पर ये सरकार की सहायता से जमीन चाहते हैं। कानून तो कच्छप चाल से चलता है। अतः गृह-निर्माण की सहकारी संस्थाओं की गति तीव्र नहीं, मन्द है।

2. दूसरी बाधा आर्थिक है। दिल्ली विकास प्राधिकरण भूमि को समतल बनाने आदि प्रारम्भिक कार्यों का और पानी, मोरी, बिजली आदि की बाद में दी जाने वाली सुख सुविधाओं का पैसा अगाऊ मांगता है। यह धन सब सहकारी संस्थाओं के लिए तुरन्त देना सम्भव नहीं होता। सहकारी संस्थाओं ने यह सोचा ही नहीं होता कि यह धन अगाऊ मांगा जाएगा। अतः उन्होंने सदस्यों से भूमि खरीदने के लिए पहली किश्त लेते हुए यह उसमें नहीं जोड़ा था। अब डी० डी० ए० की मांग पर दूसरी किश्त की मांग सदस्यों से इतनी शीघ्रता से की जाती है तो सदस्य भारी परेशानी का अनुभव करता है। नित बढ़ती मंहगाई से प्रताड़ित वेतन-भोगी सदस्य जल्दी से जल्दी आवश्यक रकम तीन माह से पहले नहीं दे पाता। प्राधिकरण धन पाए बगैर जमीन पर मकान बनाने का कार्य प्रारम्भ न होने देगा। इस कारण से घरों का निर्माण कार्य पिछड़ जाता है। दोष सहकारी संस्था पर आता है और उसकी आलोचना होती है। कार्य-प्रणाली की इस त्रुटि के लिए सहकारी संस्था को किस सीमा तक दोषी ठहराया जा सकता है? यदि डी०डी०ए० पहले ही स्पष्ट कर दे कि जमीन पर सहकारी संस्था को अधिकार और नियन्त्रण इस अवस्था में मिलेगा जब वह प्रारम्भिक सेवाओं और सुख-सुविधाओं का धन अगाऊ देगी तो सहकारी संस्था भी सदस्यों से पहली किश्त में तीन हजार रुपये न मांग कर 4,000 या 5,000 रुपया मांगती। घर पाने के प्रथम उत्साह में सदस्य भी पहली किश्त 5,000 रु० की खुशी खुशी दे देता। भले ही उसको अपनी पत्नी के गहने ही बेचने पड़ते।

3. डी० डी० ए० से सहकारी संस्था को मिली जमीन पर सहकारी संस्था का स्वामित्व का कानून अस्पष्ट है। ठीक ठीक निश्चित नहीं। इस कारण विवाद चलता है। श्री मांगेराम का सहकारी आन्दोलन से तीस साल से सम्बन्ध है। जब इतना अनुभवी व्यक्ति इस कानून को दोषपूर्ण मानता है, तब कुकरमुत्ता के समान जल्दी-जल्दी में बनी अनुभव-शून्य सहकारी संस्थाओं की क्या बात कही जाए! सहकारी संस्थाएं पूरे समय का एक क्लर्क तो रख नहीं सकतीं, वे एक वकील कैसे अपनी सेवा में रख सकेंगी? हां, कुल मिलाकर एक कानूनी परामर्शदाता रख सकती है। इससे वकीलों में एक नए वर्ग का उदय होगा। जैसे बिक्री कर, आयकर, फैक्टरी एक्ट के वकील अलग-अलग उत्पन्न हो गए हैं, वैसे ही सहकारिता सम्बन्धी कानूनों के विशेषज्ञ वकीलों का एक नया वर्ग उत्पन्न हो जाएगा। तब सहकारी संस्थाओं की कानूनी कठिनाई भी शीघ्र हल हो जाएगी।

सहकारिता सम्बन्धी कानून बनने के समय विधि विशेषज्ञों का विचार ज्ञात कर सहकारी संस्थाएं अपने प्रतिकूल और बाधक कानून का बनना रोक सकेंगी। सहकारी संस्थाओं को वकीलों को प्रश्रय देना चाहिए।

दिल्ली स्टेट कोआपरेटिव फैडरेशन और स्टेट कोआपरेटिव बैंक शीर्षस्थ संस्थाएं हैं। पर ये दोनों पारस्परिक विवादों और झगड़ों के कारण निष्क्रिय हो गई थीं। जब दिमाग ही काम न कर रहा हो, तो शरीर कैसे काम करता! वित्त कौंसिलर के प्रयास से ये दोनों पुनः सक्रिय हो गई हैं। पदाधिकारियों का नया चुनाव हो गया है। अतः सहकारी संस्थाओं के कार्य की प्रगति तीव्र होने की आशा उत्पन्न हो गई है।

दिल्ली प्रदेश में सहकारिता का आन्दोलन इस विश्वास से चलाया जा रहा है कि समाजवादी समाज की स्थापना का यह सरल और प्रशस्त राजपथ है। इसकी सफलता के लिए उपभोक्ता के उपभोग की वस्तुओं का व्यापार और नियन्त्रण संस्थाओं के हाथ में रहना चाहिए। यह उपभोक्ता सहकारी संस्थाएं ही कर सकती हैं। उपभोक्ता वस्तुओं का ठीक रीति से उनके द्वारा समाज में वितरण होगा।

परन्तु, दिल्ली प्रदेश में उपभोक्ता सहकारी संस्थाओं की बहुत कमी है। मद्रास की कामधेनु और कोयम्बतूर की

उपभोक्ता सहकारी संस्था के सदृश दिल्ली में केवल एक है। सुपर बाजार की मालिक वही है। पर वह मद्रास की कामधेनु के समान कार्यक्षम नहीं है। अंग्रेजी किसी संस्था और व्यक्ति को कार्यक्षम नहीं बनाती। इसके विपरीत वह कार्यशक्ति को क्षीण करती है। सुपर मार्केट (दिल्ली) और तमिलनाडु की राजधानी मद्रास के कामधेनु में यह उल्लेख योग्य अन्तर है। क्या सहकारी संस्थाएं इस विषय की ओर ध्यान देंगी? क्या वे अपनी प्रेरणा का स्त्रोत भारत भूमि के प्रति भक्ति को बनाएंगी?

□

अधिक उत्पादन अधिक रोजगार

कृषि पर आधारित कच्चा माल मिलने की सम्भावनाएं अच्छी हैं। जहां तक ऐसे कच्चे माल पर निर्भर औद्योगिक उत्पादन का प्रश्न है, वर्षा की स्थिति सामान्य रहने पर 1973 के मुकाबले 1974 में औद्योगिक उत्पादन अधिक होने की सम्भावनाएं हैं। यह बात औद्योगिक विकास मन्त्रालय की 1973-74 की वार्षिक रिपोर्ट में कही गई है।

लघु उद्योग के क्षेत्र में सन्तोषजनक प्रगति हुई है। इनकी संख्या में भी वृद्धि हुई है और उत्पादन में भी विविधता आई है। 31 दिसम्बर, 1973 को इनकी संख्या 4 लाख से भी अधिक थी जबकि 31 दिसम्बर, 1972 को इनकी संख्या 3,18,000 थी।

युवक इंजीनियरों और शिक्षित बेरोजगारों को अपना रोजगार-धन्धा शुरू करने सम्बन्धी योजनाएं इस वर्ष भी चलाई जाती रहीं। प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत 4,300 युवक इंजीनियरों को प्रशिक्षण दिया गया और इनमें से 400 इंजीनियरों द्वारा अपने कारखाने लगाए जाने के समाचार हैं, जिनमें लगभग 4,000 व्यक्तियों को रोजगार मिल सकेगा।

अनुमान है कि ग्राम परियोजना कार्यक्रम के अन्तर्गत मार्च, 1973 तक 38,000 से भी अधिक औद्योगिक कारखाने लगाए गए, जिनकी पूंजी 38 करोड़ रुपए है। इनमें 1,60,000 व्यक्तियों को रोजगार मिलने की सम्भावना है। लघु उद्योग विकास निगम ने 1972-73 के दौरान एक लाख से अधिक उद्योगपतियों को तकनीकी सहायता दी और लगभग 30,000 व्यक्तियों की नए उद्योगों के चुनावों में सहायता की गई। लघु उद्योग क्षेत्र में उद्योगों की संख्या 124 से बढ़ाकर 177 कर दी गई है।

ग्राम और लघु उद्योग, कृषि-उद्योग और हस्तशिल्प के क्षेत्र में सहकारी समितियों का महत्वपूर्ण स्थान है। 1973-74 में औद्योगिक क्षेत्र में सहकारी समितियों की संख्या 48,000 हो जाने की सम्भावना है। इनकी सदस्य संख्या 41 लाख 70 हजार और कार्यगत पूंजी 788 करोड़ रुपये होगी।

मन्त्रालय के अन्तर्गत सरकारी प्रतिष्ठानों के उत्पादन में निरन्तर सुधार हुआ है। राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम की परामर्श-सेवा का विकासशील देशों में महत्व बढ़ा है। निगम ने इस बारे में तंजानिया के राष्ट्रीय विकास निगम के साथ सहयोग के समझौते पर हस्ताक्षर किए। ईरान में दीर्घावधि के लिए महत्वपूर्ण उद्योगों के नियोजन के लिए संयुक्त राष्ट्र से भी निगम की सेवाओं का लाभ उठाया।

राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम ने छोटे उद्योगपतियों के लिए किराया खरीद आधार पर मशीनरी प्राप्त करने की योजना जारी रखी। 1973 के अन्त तक लगभग 13,000 छोटे कारखानों को 68 करोड़ 86 लाख रुपए मूल्य की स्वदेशी और आयातित मशीनरी सप्लाई की गई। निगम ने औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए इलाकों के विकास के लिए सक्रिय कदम उठाए और लघु उद्योगों को अप्रैल से अक्तूबर, 1973 के बीच पूर्ति और निपटान महानिदेशालय से 17 करोड़ 21 लाख रुपए के आर्डर प्राप्त करने में सहायता दी।

इन्स्ट्रूमेंटेशन लिमिटेड मलेशिया में स्थापित किए जाने वाले 3 बिजली संयन्त्रों के लिए उपकरण सप्लाई कर रहा है। इसके अलावा, कम्पनी को 30 मेगावाट के बायलर इन्स्ट्रूमेंटेशन और नियन्त्रण यूनिट के लिए भी निर्यात आर्डर मिले हैं। मिस्र और ईराक से भी आर्डर प्राप्त हुए हैं।

समिति ने कन्ट्रोल वाल्व और सहायक उपकरण तैयार करने के लिए पालघाट में एक यान्त्रिकी उपकरण संयन्त्र लगाने की योजना बनाई है जिस पर 2 करोड़ 70 लाख रुपए की पूंजी लगेगी। यह संयन्त्र अप्रैल 1975 से चालू हो जाएगा।

नेशनल इंस्ट्रूमेंटेशन, कलकत्ता में उत्पादन वृद्धि जारी रही और आशा है इस वर्ष भी उत्पादन बढ़ेगा।

राष्ट्रीय कपड़ा निगम के अधीन 63 मिलों ने जनवरी से सितम्बर 1973 के दौरान लगभग 7 करोड़ रुपए का शुद्ध लाभ कमाया है और 25 मिलों को लगभग एक करोड़ 35 लाख रुपए की शुद्ध हानि हुई है। इस प्रकार इन 88 मिलों को कुल 5 करोड़ 60 लाख रुपए लाभ हुआ। निगम के अधीन इस समय 103 मिले हैं।

अन्य अनेक सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में भी उत्पादन बढ़ने की सम्भावना है।

□

पोषाहार की नई दिशाएं

बुद्धप्रिय मौर्य

विकासशील देशों में कुपोषण और अल्प-पोषण की समस्या काफी गम्भीर रूप से विद्यमान है। यह समस्या हमारे देश में भी अपना पंजा जमाए हुए है। व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण जनता को इस बात की जानकारी देना है कि गांवों में पौष्टिक आहार किस तरह तैयार किया जाए और उसका किस तरह इस्तेमाल किया जाए। इससे पोषाहार कार्यक्रम को गति मिलेगी।

व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम एक दशक से चलाया जा रहा है और ग्रामीण जनता के स्वास्थ्य के लिए इसके महत्व को देखते हुए इसे पांचवीं योजना में भी चालू रखने का निर्णय किया गया है। संसाधनों के सीमित होने के कारण इस कार्यक्रम को चुने हुए वर्गों के हित के लिए ही चलाया जाएगा। इसके अन्तर्गत स्कूल जाने से कम उम्र के बच्चे और स्कूल जाने वाले बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं और दूध पिलाने वाली माताओं को प्राथमिकता दी जाएगी क्योंकि इन्हें पोषाहार की अधिक आवश्यकता होती है।

अब इस कार्यक्रम को समेकित रूप से चलाया जाएगा और इसके अन्तर्गत स्वास्थ्य सेवाएं, पेयजल की सुविधाएं तथा स्वच्छता आदि बातों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। पांचवीं योजना में इस बात को माना गया है कि ये सब काम एक साथ किए जाने पर अधिक प्रभावकारी हो जाते हैं। अतः इस कार्यक्रम के अन्तर्गत इन सभी बातों पर ध्यान दिया जाएगा।

पांचवीं योजना में व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के लिए केन्द्रीय सहायता के रूप में 20 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है। वर्तमान कार्यों में तेजी लाने के लिए 700 अतिरिक्त खण्ड व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के अन्तर्गत लाए जाएंगे और जिन खण्डों में यह कार्यक्रम पहले से ही चल रहा है उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के प्रयत्न किए जाएंगे। आशा है कि इससे राज्य सरकारों की अधिक पोषाहार खण्ड खोलने की मांग पूरी हो जाएगी। चौथी योजना के अन्त में इन खण्डों की संख्या 1,181 थी और पांचवीं योजना में इसे बढ़ाकर 1,881 कर दिया जाएगा। इस प्रकार 35 प्रतिशत विकास खण्ड इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आ जाएंगे।

विभिन्न क्षेत्रों की मांग के अनुसार सहायक पौष्टिक खाद्यों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए वहां की परिस्थितियों के अनुसार कार्यक्रम में फेर-बदल किया जा सकता है। साथ ही प्रशिक्षण और शिक्षा पर भी जोर देना होगा।

संगोष्ठी का प्रमुख उद्देश्य पांचवीं योजना के लिए मास्टर प्लान तैयार करना है। इसमें अन्य बातों के अलावा भविष्य के कार्यक्रम की रूपरेखा भी बनाई जाएगी। इन बातों की तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए :

(1) एक समन्वित प्रशासन तन्त्र की व्यवस्था करना जो कृषि, पशुपालन, मत्स्य पालन, स्वास्थ्य आदि विभागों से निकट सम्पर्क रखेगा।

(2) क्षेत्रों की वर्तमान क्षमताओं के अनुरूप खण्ड स्तर पर योजना तैयार करना।

(3) कार्यक्रम को अधिक से अधिक सफल बनाने के लिए वित्तीय संसाधनों का उचित प्रयोग करना।

(4) अनुसन्धान और प्रशिक्षण के पहलुओं पर समुचित ध्यान देना जिससे कि उनका अधिक प्रभाव पड़े।

व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम की संगोष्ठी

त्रिलोकीनाथ

नई दिल्ली में गत 27-28 मई को हुई व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम संगोष्ठी में इस बात पर जोर दिया गया कि जिन खण्डों में सम्भव हो वहां व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम और समेकित बालविकास कार्यक्रम इकट्ठे चलाए जाएं। इन कार्यक्रमों के संचालन का प्रशासन सामुदायिक विकास खण्ड करेगा। अतः इन कार्यक्रमों को सम्मिलित रूप से चलाने में प्रशासनिक कठिनाई नहीं होगी।

संगोष्ठी में यह भी कहा गया कि व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के लिए धनराशि खण्ड में ही रखी जाए तथा बजट में इसके लिए निर्धारित राशि भी

एक अलग मद में खण्ड अधिकारियों के पास ही रखी जाए।

पांचवीं योजना में लागू की जाने वाली व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम से सम्बन्धित मास्टर प्लान पर भी जोरदार बहस हुई। इस मास्टर प्लान में 700 नए विकास खण्डों को व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के अन्तर्गत लाने की योजना है। इनमें से 450 खण्डों को यूनिसेफ' से सहायता मिलेगी और शेष 250 खण्डों के लिए केन्द्रीय और राज्य सरकारें धन जुटाएंगी। 'यूनिसेफ' ने पांचवीं योजना में ऐसे 175 विकास खण्डों को भी सहायता देना स्वीकार किया है जिनमें यह कार्यक्रम पहले से ही चलाया जा रहा है।

संगोष्ठी में भाग लेने वालों का मत था कि 'यूनिसेफ' सभी 700 खण्डों को सहायता दे। पर, 'यूनिसेफ' के प्रतिनिधि ने बताया कि संसाधनों के कम होने के कारण इस समय ऐसा सम्भव नहीं है।

व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम की समीक्षा करते हुए सम्मेलन में आए प्रतिनिधियों ने इस बात पर जोर दिया कि 'यूनिसेफ' से मिलने वाली सहायता पोषाहार कार्यक्रम के किसी अंग विशेष के लिए पूर्वनिर्धारित न हो बल्कि लचीली हो ताकि सम्बन्धित खण्ड की परिस्थितियों के अनुसार उसका उपयोग किया जा सके। उन्होंने यह भी कहा कि बागवानी पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। मुर्गियों के दाने की कीमतें बढ़ जाने के कारण यही उचित होगा कि लोग निजी रूप से घर के आंगन में ही मुर्गियां पालें। मत्स्य-पालन केवल चुने हुए क्षेत्रों में ही किया जाए और समुद्रतटीय क्षेत्रों में विधायन करके मछलियों को सुरक्षित खाद्य के रूप में रखने की तथा विटामिन के स्रोत के रूप में अन्य पोषाहार क्षेत्रों में भेजने की भी छूट दी जाए।

संगोष्ठी में यह अनुभव किया गया कि प्रशिक्षण इस कार्यक्रम का एक बहुत महत्वपूर्ण अंग है, अतः प्रशिक्षण की जांच करके उसे अधिक असरदार बनाया जाए।

शुरू में संगोष्ठी में आए लोगों का स्वागत करते हुए सामुदायिक विकास और सहकारिता विभाग के सचिव श्री एम० ए० कुरैशी ने कहा कि व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम काफी सफल रहा है। उन्होंने विभिन्न एजेंसियों की समन्वित प्रशासकीय पहुंच की आवश्यकता, विशेष केन्द्रीय सहायता के उचित प्रयोग, तथा कार्यक्रम से सम्बद्ध सभी अधिकारियों—सरकारी या गैरसरकारी—को प्रशिक्षण देने पर जोर दिया और कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की सहायता और जानकारी को ऐसे ढंग से इस्तेमाल किया जाए कि आत्मनिर्भरता लाई जा सके। उन्होंने यह भी कहा कि जनता के स्वयं के प्रयासों और संसाधनों से कार्यक्रम को सक्षम बनाने में भी कार्यक्रम ने महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त की है।

यूनिसेफ के क्षेत्रीय निदेशक श्री वारेन फुल्लर ने बतलाया कि उनके मुख्य कार्यालय ने पांचवीं योजना काल में व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के सुझावों को मान लिया है। उन्होंने कहा कि कार्यक्रम स्थानीय परिस्थियों के अनुसार लागू किया जाना चाहिए और योजना खण्ड-स्तर पर बनाई जानी चाहिए। □

दसवीं अखिल भारतीय बुनियादी साहित्य प्रतियोगिता

पुरस्कृत रचनाओं का विवरण

विजय कुमार कोहली

'समन्वित ग्राम-विकास के माध्यम से रोजगार के और अधिक अवसर' विषय पर लिखित श्री खलील सैयद की बंगला रचना 'पाल्ली उनासिन तथा करम संस्थान' में ग्राम-विकास के उन कार्यक्रमों/योजनाओं का वर्णन किया गया है, जिनसे अतिरिक्त आय की वृद्धि के अलावा ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के सुधार में सहायता मिल सकती है। ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों और विशाल ग्रामीण जनशक्ति के समुचित प्रयोग के लिए लघु-योजनाओं के विकास पर बल दिया गया है। किसानों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना का सुझाव भी दिया गया है।

'ग्रामीण क्षेत्रों में पोषाहार की कमी की समस्या' विषय पर डा० के० वी० पैसे की मराठी रचना 'ग्रामीण भागांतील अपून्या व निकस आहारांची समस्या' में सन्तुलित भोजन के प्रयोग से सम्बन्धित ग्रामीण क्षेत्र की समस्याएं वर्णित हैं। सरल संवाद की भाषा में लिखित यह रचना लघु-कथाओं के रूप में नौ अध्यायों में विभक्त है। इन लघु कथाओं के पात्र महिलाएं हैं, वातावरण ग्रामीण और विषयवस्तु सार्वजनिक लाभप्रद है।

'खण्ड और आयोजना के माध्यम से स्थानीय विकास कार्यक्रम' विषय पर श्री मन्मथनाथ दास लिखित बंगला नाटक 'सोनार काथी' में यह दर्शाया गया है कि आदर्श गांव की स्थापना के लिए युवकों में लगन और प्रयत्नों की आवश्यकता है। इसमें आत्मनिर्भरता, पारस्परिक सहयोग, स्वास्थ्य शिक्षा, महिला मण्डल आदि की ग्राम-विकास के परिप्रेक्ष्य में चर्चा की गई है। युवा पीढ़ी के लिए शैक्षणिक सामग्री से भरपूर इस नाटक में खण्ड और ग्राम-स्तरों पर विकास के लिए सहकारिता को अपनाने पर बल दिया गया है।

'पंचायती राज संस्थाओं का विकास सुनिश्चित कैसे करें' विषय पर श्री सचीन्द्रनाथ चन्दा लिखित बंगला रचना 'पंचायतेर सार्थक रूपायनो विकाश' में पंचायती राज के प्रत्येक पक्ष का विशद वर्णन और विश्लेषण है। लेखक के कई लाभप्रद सुझावों में से एक यह भी है कि ग्राम-विकास के लिए पंचायती राज संस्थाएं अपनी आय स्वयं बढ़ाएं। इस रचना में पश्चिम बंगाल की पंचायती

राज संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन अन्य राज्यों के व्यावहारिक अनुभव के सन्दर्भ में किया गया है। इन संस्थाओं को सफल बनाने के लिए सुझाव भी दिए गए हैं।

'अभिनव परिवर्तन अपनाने से समाज की स्थानीय समस्याओं का समाधान' विषय पर श्री नक्कन मिर्जा लिखित उर्दू नाटक में यह दर्शाया गया है कि गांव की समस्याओं का हल ग्राम सभा में पारस्परिक विचारविमर्श से हो सकता है। इस चार अंकों के नाटक में ग्रामीण झगड़ों को निपटाने के तरीके, बच्चों की शिक्षा की समस्याएं, संक्रामक रोगों की रोकथाम आदि का वर्णन तो है ही, साथ ही ग्रामीणों को विकास कार्यक्रमों में रुचि लेने के लिए प्रेरणा भी है।

'ग्रामीण समुदायों में नेतृत्व का निर्माण' विषय पर डा० बिनोद शर्मा लिखित असमी रचना एक अध्यापक और विकास-अधिकारी के नेतृत्व में ग्राम-विकास की कहानी है। अनेक कमियों और कठिनाइयों के बावजूद वे एक पिछड़े हुए गांव के लोगों का अन्धविश्वास दूर कर उनका सहयोग प्राप्त करने में सफल होते हैं। अपने गांव को आदर्श गांव में परिवर्तित कर वे सभी के लिए प्रेरणा प्रदान करते हैं।

'खुशहाल ग्रामों के लिए बेहतर सफाई' विषय पर श्री प्रनब कुमार फुकों की असमी रचना 'अमार गांव' में सफाई, पयजल, रोगों की रोकथाम और उनके उपचार आदि का विस्तृत विवरण है। लेखक पूर्ण स्वराज्य के लिए महात्मा गांधी के गांवों के स्वप्न को साकार करना चाहता है। इसके लिए युवकों के योगदान और जनता के सहयोग की आवश्यकता का प्रतिपादन किया गया है।

'कृषि उपज का विपणन और विधायन सहकारी तरीके से' विषय पर श्रीमती एस० कलासेकर की तमिल रचना 'वलाइपोरुल बरपानीयम पक्कुअम सिथालुम कुट्टुरावु मुरैगिल' में लेखिका ने ऋणदात्री और विपणन सहकारी समितियों के योगदान की चर्चा की है और सुझाया है कि किसानों के हित के लिए इनका पारस्परिक सहयोग आवश्यक है। चीनी, कपड़े, जूट आदि के कारखानों की स्थापना और कृषि उपज के विधायन में सहकारिता की उपयोगिता का वर्णन भी किया गया है।

'आदिवासी क्षेत्रों में सहकारियों की भूमिका' विषय पर नीलाधर हैगडे की मराठी रचना 'रामू मास्तर' एक ऐसे समाजसेवक की कहानी है, जिसने आदिवासियों के विकास के लिए अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया। इस रचना की कथावस्तु महाराष्ट्र के थाना जिले के आदिवासियों से सम्बद्ध है। सरल भाषा में आदिवासियों को सहकारिता के मार्ग की ओर उन्मुख होने के लिए प्रेरित किया गया है।

'कमजोर वर्गों की सेवा में सहकारियों की भूमिका' विषय पर लिखित श्री भादरम सैकिया की असमी रचना 'कुरुक्षेत्र' एक सामाजिक नाटक है, जिसमें गांव के कमजोर वर्गों की समस्याओं, उनकी अच्छाइयों और बुराइयों का चित्रण है। असत्य, हिंसा, गरीबी और भ्रष्टाचार के विरुद्ध युद्ध के लिए तत्पर ग्रामीणों में यह धारणा घर कर जाती है कि आपस की मेहनत और सहयोग से वे बुराई पर अच्छाई और गरीबी पर खुशहाली की विजय को देख सकते हैं। कुरुक्षेत्र का युद्ध उसी का पर्याय है।

'कृषि उत्पादन में सहकारी सोसाइटियों का योगदान' विषय पर लिखित श्री ए० पी० श्रीनिवासमूर्ति की कन्नड़ रचना 'कृषि उत्पादनेगे सहकारा ससंस्थेगला सहाया' में लेखक ने विभिन्न सहकारी संस्थाओं के क्रियाकलापों का वर्णन किया है। इन संस्थाओं की उन कमियों का वर्णन भी किया गया है, जिनसे कृषि उत्पादन में बाधा आती है। इनको दूर करने के उपाय भी सुझाए गए हैं। केन्द्र एवं राज्य सरकारों, रिजर्व बैंक और कृषि पुनर्वित्त निगम आदि के मार्गदर्शन और सहयोग का उल्लेख भी किया गया है।

'सहकारिता के क्षेत्र में युवक' विषय पर तमिल भाषा में लिखित श्री के० एस० नागराजन की रचना 'कुट्टुरावु मोरायुम इलनजर पानीयम' में लेखक ने ग्राम-विकास के सड़क-निर्माण, कूप निर्माण आदि कार्यों का वर्णन किया है, जो युवकों द्वारा किए जा सकते हैं। उन सहकारी संस्थाओं का उल्लेख भी है जिन्हें युवक सफलतापूर्वक चला सकते हैं। तमिलनाडु की ऐसी सफल सहकारियों का उल्लेख भी किया गया है। छात्रों द्वारा अवकाश के दिनों में किए गए ग्रामसुधार के कार्यों की सराहना की गई है।

'सहकारियों के माध्यम से दुग्ध क्रान्ति' विषय पर उर्दू में लिखित श्री नन्दकिशोर विक्रम की रचना 'सफेद इन्कलाब' में दुग्ध-क्रान्ति के लिए सहकारी समितियों और दूसरे अभिकरणों के प्रयास का वर्णन है। इसमें दुग्ध संस्था को वैज्ञानिक विधि और सहकारी आधार पर चलाने का विस्तृत विवरण दिया गया है। भारत के विभिन्न भागों में इस दिशा में किए गए प्रमुख प्रयासों और अनुभवों की चर्चा भी की गई है।

'खाद्यान्नों और अत्यावश्यक पदार्थों की सार्वजनिक वितरण पद्धति में सहकारी सोसाइटियों की भूमिका' विषय पर लिखित श्री डी० सी० मंघवानी की सिंधी रचना 'अनाज एन बियन जरूरी शयुन खे जनता ताई पहुंचाने में सहकारी संस्थाउं जा फर्ज' में सरकार द्वारा अनाज को प्राप्त करने और इसके वितरण की चर्चा के साथ ही इसमें और सुधार लाने के सुझाव दिए गए हैं। □

सहकारी आन्दोलन और उसकी समस्याएं

जगदीश शरण गुप्ता

भारत में सहकारिता आन्दोलन शुरू हुए लगभग 70 वर्ष हो चुके हैं। परन्तु अभी भी सहकारी संस्थाओं की दशा बड़ी ही शोचनीय है। भारत को ही सहकारिता का आन्दोलन शुरू करने का श्रेय है। परन्तु अभी हमने इस क्षेत्र में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं की है।

भारत में जितनी भी सहकारी संस्थाएं हैं उनमें काफी विभिन्नताएं हैं। कार्यकलापों तथा क्षमता में काफी अन्तर है। इन सब करतबों से जितनी सफलता सहकारिता आन्दोलन को मिलनी चाहिए थी न मिल सकी।

सहकारी क्षेत्र के प्रति कुछ लोगों का प्रबल लगाव है और कुछ का प्रबल विरोध है। सहकारिता का समर्थन करने वाले लोग भी हैं। पिछले 70 वर्षों में सहकारी संगठनों की संख्या बढ़कर 3 लाख हो गई है जिनकी सदस्य संख्या 6 लाख है। सहकारी आन्दोलन वैविध्यपूर्ण है। सहकारिता के अन्तर्गत विभिन्न सामाजिक आर्थिक कार्यक्रम चल रहे हैं। सबसे उल्लेखनीय कार्यक्रम सहकारिता द्वारा कृषि ऋण और बैंकिंग से सम्बन्धित है। सहकारिता के द्वारा कृषि विपणन का भी कार्य किया जाता है। इसके बाद खाद, कृषि उपकरणों के निर्माण और वितरण, उपभोक्ता व्यापार, ग्रामीण लघु उद्योग, परिवहन, श्रम और निर्माण से सम्बन्धित उत्पादन तथा वितरण के कार्यक्रम भी किए जाते हैं। आज देश में रिक्शाचालकों, धोबी, नाई, चमार तथा फुटकर व्यापारियों की भी सहकारी समितियां अपना कार्य बड़े सन्तोषजनक ढंग से कर रही हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे किसानों तथा अल्प आय के व्यक्तियों के वास्ते लघु तथा मध्य काल की आवश्यकताओं के वास्ते ऋण प्राथमिक कृषि ऋण समितियों के माध्यम से दिलाया जा रहा है। सहकारी बहूद्देश्यीय समितियों द्वारा भी विभिन्न आवश्यकताओं के लिए ऋण दिया जाता है। वर्ष 1950-51 में 43 करोड़ रुपये सहकारिता की विभिन्न समितियों द्वारा व्यय किए गए थे। वर्ष 1970-71 में यह राशि बढ़कर 564 करोड़ रु० हो गई। दीर्घकालीन आवश्यकता के वास्ते भूमि विकास बैंकों द्वारा ऋण दिया जाता है। वर्ष 1950-51 में 1.4 करोड़ रुपये दीर्घ अवधि के ऋणों के वास्ते व्यय किए गए थे परन्तु, 1871 में 167 करोड़ व्यय हुए। वर्ष 1950-51 में सहकारी कृषि विपणन संस्थाओं द्वारा 47 करोड़ रु० का व्यापार किया गया जो 1970-71 में बढ़कर 655 करोड़ रु० हो गया।

आज देश में उत्पादित कुल चीनी का एक तिहाई सहकारिता के अन्तर्गत तैयार होता है। वर्तमान वर्षों में पशुपालन, डेयरी और दुग्ध पूर्ति के क्षेत्र में भी सहकारिता का उल्लेखनीय विस्तार हुआ है। सहकारी संस्थाओं की सहायता के बगैर कृषि विकास सम्भव नहीं है।

सहकारिता आन्दोलन की असफलता का मुख्य कारण भौगोलिक विषमता है। सहकारिता का तीव्र विस्तार देश के सभी राज्यों में एक समान नहीं हो रहा है। देश के एक बहुत बड़े भूभाग में, विशेष तौर पर पूर्वी क्षेत्र में सहकारिता आन्दोलन का प्रभाव बहुत क्षीण है।

सहकारिता के आर्थिक और सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति मुख्यतः इसके प्रबन्धकों की कुशलता पर निर्भर करती है। सहकारी समितियों का प्रशासन कुछ चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथों में होता है। भारत में सहकारिता आन्दोलन की निरन्तर उपेक्षा हो रही है। जनता सहकारिता के मूल तत्वों पर विचार नहीं करती है। जनता को इस तरह उदासीन नहीं रहना चाहिए।

सहकारिता आन्दोलन की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि प्रबन्ध व्यवस्था योग्य और प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा की जाए।

सहकारिता के मूल तत्वों का विशाल स्तर पर प्रचार हो। सहकारिता आन्दोलन के शरीर का जहां विकास हो रहा है वहां उसकी आत्मा का भी विकास हो। कृषि की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने में सहकारी बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाए। क्षेत्रीय विषमताएं कम की जाएं। सहकारिता के संगठन को शक्तिशाली बनाया जाए।

सहकारी बैंकों को सुदृढ़ बनाया जाए। जिला सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में भी सुधार की आवश्यकता है। छोटे किसानों को सहकारी बैंकों को अधिक ऋण देना चाहिए। छोटे किसानों की उपज को उचित कीमत पर क्रय कराने में सहकारी बैंकों को पूर्ण सहयोग देना चाहिए।

देश में सहकारी उपभोक्ता संस्थाओं का अधिक विकास होना चाहिए। सहकारी उपभोक्ता भण्डारों में वस्तुएं सस्ती कीमत पर उपलब्ध होनी चाहिए।

सहकारी विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि सरकार तथा कर्मचारियों के नेतृत्व में परिवर्तन आए तथा अपने उत्तरदायित्वों को साहस और दूरदर्शिता से निभाएं।

□

जिला सांख्यिकीय अधिकारी
होशंगाबाद (म० प्र०)

भारतीय किसान की ऋण समस्या एवं समाधान

राधेश्याम शर्मा

भारत एक ऐसा देश है जिसकी आबादी का 70 प्रतिशत कृषि पर निर्भर करता है। इसीलिए किसान को भारत की आत्मा कहते हैं। यदि इनको पेट भरकर भोजन न मिले, ये सदैव अभावग्रस्त रहें तथा दिन-रात खाने व पहनने की चिन्ता में ही डूबे रहें तो देश खुशहाल नहीं समझा जा सकता। जब देश की आत्मा ही व्यथित हो, चिन्तातुर हो तो देश कैसे सुखी रह सकता है! ब्रिटिश शासन काल में तो किसान का शोषण जानबूझ कर किया जाता था या देश के ही कुछ व्यक्तियों के द्वारा कराया जाता था। परन्तु खेद का विषय तो यह है कि आजादी के 25 वर्ष बाद भी देश के छोटे एवं मध्यम वर्गीय किसान अभावग्रस्त जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अब भी वे कर्जदार हैं—साहूकार के या अपने धनी किसान भाई के।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद ही सरकार ने किसानों की स्थिति ऊपर उठाने के लिए कई योजनाएं बनाई। जागीरदारी एवं बिस्वेदारी उन्मूलन कानून बनाकर खेत जोतने वाले को खेत का सही अर्थों में मालिक बनाया गया, पैदावार बढ़ाने के लिए ऋण, रासायनिक खाद एवं उत्तम बीज उपलब्ध कराए गए जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन बढ़ा, उनकी आमदनी बढ़ी जिससे उनका मानसिक विकास हुआ, उनके रहन-सहन का मानदण्ड बदला। परन्तु एक कमी रह गई। ये सरकारी सुविधाएं ग्राम व साधारण किसान तक नहीं पहुंच सकी बल्कि इसका फायदा उठाया उस किसान ने जो पहले से ही अच्छी स्थिति में था, जिसका राज्य शासन में हिस्सा था या जो किसी प्रकार अधिकारी से तालमेल बैठा सकता था।

इसका परिणाम यह हुआ कि किसानों में ही एक वर्ग ऐसा हो गया जो किसानों का महाजनों से भी अधिक शोषण करने लगा। और जो बाकी रहे वे पहले से ही अधिक ऋण के बोझ के नीचे दबते चले गए। स्थिति यहां तक पहुंच गई कि ऋण को चुकाने के लिए उनको अपनी जमीन बेचनी पड़ी। यदि हम पिछले दस बरस के जमीन की बिक्री के तथ्य इकट्ठे करें तो हम देखेंगे कि लगभग 80% जमीन बेचने वाले ऐसे किसान थे जिन्होंने या तो कर्ज अदा करने के लिए अपनी जमीन बेची है या लड़के व लड़की की शादी करने के हेतु।

यदि हम स्वतन्त्रता पूर्व की स्थिति पर ध्यान न देकर स्वतन्त्रता पश्चात् की स्थिति का अध्ययन करें तो हमें यह देखकर आश्चर्य होगा कि किस प्रकार ऋणभार प्रति वर्ष किसानों पर बढ़ता चला जाता है। रिजर्व बैंक आफ इण्डिया द्वारा समय-समय पर किए गए सर्वेक्षण के अनुसार 1951-52 में प्रति कृषक परिवार ऋण की औसत 283/- रु० थी जो 1961-62 में बढ़कर 406/- रु० हो गई और यदि 1972-73 का सर्वेक्षण किया जाए तो यह राशि प्रति परिवार 700/- रु० से कम नहीं होगी। परन्तु एक परिवर्तन कृषक समाज में अवश्य ही देखने में आया है स्वतन्त्रता पूर्व या स्वतन्त्र भारत के प्रारम्भिक काल में ऋण प्राप्त करने का साधन ग्राम का महाजन था और अब यह कार्य कृषक वर्ग ही करने लग गया है। क्योंकि सरकार की ऋण नीति को देख कर महाजन वर्ग ने धीरे-धीरे अपना रुपया अन्य धन्धों में लगाना शुरू कर दिया है और उसकी जगह ले ली है ग्राम के बढ़ते हुए किसान ने, जिसके पास धन के अतिरिक्त शारीरिक शक्ति भी है। उसने अपने भाई का शोषण साहूकार से भी दुगनी गति से करना शुरू कर दिया है। ब्याज की दर बढ़ गई है। सन् 1952 में किए गए सर्वेक्षण के अनुसार भिन्न-भिन्न राज्यों में ब्याज की दर निम्न प्रकार है :—

बिहार व उत्तर प्रदेश	30% प्रति वर्ष
हिमाचल प्रदेश	40% ,, ,,
उड़ीसा	70% ,, ,,

इसके साथ ही काटा आदि भी काटा जाने लगा है और अब तो स्थिति यह है कि 100/- रु० देने पर 200/- रु० का हिसाब लिखाया जाता है और एक वर्ष का ब्याज पहले ही काट लिया जाता है। अतः आज साधारण, छोटे एवं मध्यम वर्गीय कृषक की स्थिति यह हो गई कि उसे अपनी जमीन बेच कर ही ऋण से पिण्ड छुटाना पड़ता है।

कई कृषक परिवारों में तो ऋण खानदानी हो गया है। तीन-तीन पीढ़ियों से ऋण बढ़ता ही जाता है। जो कुछ पैदा होता है वह तो फसल पर ही साहूकार ले लेता है। स्थिति यहां तक हो जाती है कि फसल उठाने के बाद वह अपने कृषि के साधन तथा बैल या ऊंट भी बेच देता है। यदि कोई अच्छी गाय या भैंस हो तो वह भी साहूकार ले जाता है। फिर कुटुम्ब के पालन पोषण का क्या प्रबन्ध किया जाए? उसे उसी साहूकार से ऋण लेना पड़ता है। वह अनाज लेते समय तो छः प्रतिशत बाजार भाव से कम लेता है और देते समय बाजार भाव से छः प्रतिशत से साढ़े बारह प्रतिशत तक अधिक पर देता है। इसके अतिरिक्त लेते समय तो सारा अनाज एक ही बार ले लेता है परन्तु देते समय किसान को एक-एक मन करके देता है। इसमें भी किसान को एक से अधिक बार साहूकार के घर के चक्कर लगाने पड़ते हैं। परिणामस्वरूप उसे कमाई के दिनों का भी नुकसान होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि आजादी के पच्चीस वर्ष बाद भी किसान गरीब होता जा रहा है। उसके ऋण की मात्रा बढ़ती जा रही है। अतः आवश्यकता है कि इस विषय पर गहन अनुसन्धान करके इस मर्ज का इलाज किया जाए ताकि किसान भी ऋणमुक्त जीवन का रसास्वादन कर सके और खुशहाली से रह सके। संक्षेप में निम्न कुछ कारण हैं जो किसान की ऋणग्रस्तता में सहयोग देते हैं। यदि उनमें सुधार हो जाए व साथ ही ग्राम में कुछ आय बढ़ाने के कुटीर उद्योग शुरू

कर दिए जाएं तो किसान स्वयं ही अपनी आमदनी बढ़ाने लगेगा जिससे कुछ समय में वह खुशहाल हो कर ऋण से मुक्त हो जाएगा।

स्वतन्त्रता के पश्चात् देहात में भी किसान व अन्य धन्धों वालों का मानसिक विकास अच्छा हो गया है परन्तु मानसिक विकास के अनुपात में उसका आर्थिक विकास नहीं हुआ है। परिणामस्वरूप रहन-सहन का खर्चा आय से अधिक हो गया है। आज हर कृषक व मजदूर चाहता है कि उसके पास पक्का मकान हो, रेडियो हो तथा बढ़िया फर्नीचर हो। यह सब जुटाने के लिए उसे ऋण लेना पड़ता है। यदि आज हम ग्रामों का सर्वेक्षण करें तो देखेंगे कि पुराने मकानों को, हवेलियों को (जो ग्राम के बीच में स्थित है) छोड़कर किसान ग्राम के बाहर खेतों में आधुनिक ढंग के मकान बनाने में लगे हैं। प्रत्येक ग्राम में सौ से दो सौ बीघा तक जमीन इस प्रकार मकान बनाने के कारण अनुत्पादक हो चुकी है जिससे एक तरफ तो पैदावार मे नुकसान होता है तथा दूसरी तरफ काफी रकम अनुत्पादक कार्य में खर्च हो जाती है, जो एक विकासमान राष्ट्र के लिए लाभप्रद नहीं होती। मेरा इससे यह अभिप्राय नहीं है कि किसान मकान बनाएं ही नहीं और अपने पुराने कच्चे मकान व झोंपड़ियों में ही रहते रहें परन्तु मेरी राय में अच्छा तो यह रहे कि पुराने मकानों को तोड़फोड़ कर आधुनिक बना लिए जाएं जिससे खर्च भी कम हो व जमीन भी बचे। यदि कहीं इकट्ठी जमीन हो जहां कुआं आदि भी बना हुआ हो तो वहां फार्म हाऊस बनाना पैदावार में ही सहायक हो सकता है। इधर जमीन की कीमत बढ़ने से किसान की हैसियत बढ़ी है। परिणामस्वरूप उनको ऋण मिलने की सीमा अधिक हो गई है और वे लोग अधिक ऋण लेकर इस प्रकार के अनुत्पादक कार्यों में व्यय कर रहे हैं जिसके कारण वह सदैव ऋणग्रस्त ही रहते हैं तथा जो भी पैदावार होती है वह ब्याज आदि में ही दे दी जाती है और असल रकम बाकी रहती है।

उद्योग धन्धों का अभाव :—कृषक पर ऋण भार का एक और कारण है—**जमीन पर प्रतिदिन बढ़ता हुआ भार**। कृषि धन्धा एक ऐसा कार्य है जिसके लिए किसी विशेष योग्यता की व विशेष शिक्षा की आवश्यकता नहीं है। बस केवल हल जोतना आना चाहिए जिसके सीखने में अधिक से अधिक दस दिवस का समय पर्याप्त होता है। इसके विपरीत अन्य धन्धों में विशेष प्रशिक्षण एवं पूंजी की आवश्यकता होती है। परिणामस्वरूप जिसे अन्य कोई रोजगार न मिले वह खेती में ही लग जाता है। आज यदि हम दुनिया के अन्य देशों से तुलना करें तो देखेंगे कि अमेरिका में सोलह से अठारह प्रतिशत व्यक्ति, रूस में 14 प्रतिशत व्यक्ति, एवं जापान में सोलह प्रतिशत व्यक्ति खेती पर निर्भर करते हैं और उनकी तुलना में हमारे देश में 75% व्यक्ति खेती द्वारा अपना निर्वाह कर रहे हैं। अतः आवश्यक है कि खेती पर भार कम करने के लिए ग्रामों में उद्योग धन्धे स्थापित किए जाएं। **एक ग्रामीण उद्योग मण्डल का गठन किया जाए जो ग्रामों में पहल करके उद्योग धन्धों का काम शुरू करे व अन्य उत्साही व्यक्तियों को सुविधापूर्वक आसान किश्तों पर बिना ब्याज ऋण दे**। उनको उद्योग स्थापित करने में बिना मूल्य (फ्री) टेक्निकल सहायता दे। अपने विशेषज्ञ भेजकर उद्योग स्थापित करने में उनको सुझाव दे जिससे कृषि से हटकर ग्रामीण लोग पैदावार के अन्य साधनों द्वारा अपना जीवन सम्पन्न कर सकें।

पैत्रिक अधिकार के कानून में संशोधन :—यहां जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े होने का एक कारण उत्तराधिकारी कानून भी है जिसके अनुसार पिता की जायदाद सब लड़कों में बराबर बांटी जाती है। परिणामस्वरूप जमीन का बंटवारा भी होता है। पीढ़ियों के बंटवारे के कारण जमीन के टुकड़े पर टुकड़े होते जाते हैं। छोटे-छोटे टुकड़े होने से वह जमीन आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं रहती क्योंकि थोड़ी जमीन में न तो वह कोई सिंचाई आदि के साधनों का प्रबन्ध ही कर सकता है और न ही उसे बेचकर अन्य कार्य में पूंजी लगा सकता है। उसकी स्थिति सांप छछून्दर जैसी हो जाती है। आवश्यकता होने पर उसे मजबूरन कर्ज लेना पड़ता है, जिसे एक बार लेने पर वह पीढ़ियों का अनचाहा मेहमान बन जाता है।

बिक्री भाव एवं खरीद भाव में अन्तर :—कृषक के ऋणग्रस्त होने का एक मुख्य कारण है फसल के समय अनाज एवं अन्य जिन्सों का भाव सस्ता रहना तथा बाद में मंहगा हो जाना। जब किसान अपनी पैदावार बेचता है तो भाव सस्ता रहता है परन्तु जब उसे खरीदना पड़ता है तो भाव दुने से भी अधिक बढ़ जाता है। उदाहरणार्थ सन् 1968 में अप्रैल व मई माह में गेहूं का भाव 55 से 60 रुपया प्रति क्विण्टल था परन्तु नवम्बर, दिसम्बर में गेहूं का भाव 120 रुपया क्विण्टल हो गया। इसी प्रकार सन् 1972 के मई व जून में गेहूं का भाव 70 रुपया क्विण्टल था जो जनवरी, फरवरी सन् 1973 में जाकर 150 रुपया क्विण्टल हो गया। इस प्रकार भावों में अन्तर होना किसान के लिए अभिशाप है। जब वह बेचता है तो 70 रुपया क्विण्टल और खरीदता है तो 150 रुपया क्विण्टल और फिर वह बेचता है तो 70 रुपया क्विण्टल इस प्रकार से उसे 40 किलोग्राम के बदले 90 किलोग्राम देना पड़ता है।

ऐसी व्यवस्था में क्या कभी कोई किसान अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सकता है? अतः सरकार का कर्त्तव्य है कि वह फसल के समय भाव निश्चित कर दे और देखे कि बाद में भी ये भाव अधिक से अधिक 5 रु० क्विण्टल से ज्यादा न बढ़ें।

आवश्यक ऋण :—बैंक राष्ट्रीयकरण से पूर्व किसानों को भूमि विकास के लिए पंचायत समिति या भूमि

बन्धक बैंक से ऋण दिया जाता रहा है परन्तु राष्ट्रीयकरण के पश्चात पंचायत समितियों द्वारा ऋण देना बन्द कर दिया गया है और अब ऋण राष्ट्रीयकृत बैंकों व सहकारी बैंकों द्वारा दिया जा रहा है। परन्तु यह ऋण किसानों की स्थिति में वांछित परिवर्तन नहीं ला सकता क्योंकि उस ऋण के प्राप्त करने में अनेक अड़चनें उनके आगे आती हैं और अधिकतर किसान इस ऋण को लेकर लड़के या लड़की की शादी में खर्च कर देते हैं। उसे साहूकार के चंगुल से निकालने का रास्ता अभी तक सरकार द्वारा नहीं ढूंढा जा सका है। दुनिया के जितने भी समाजवादी देश हैं उनमें एक कानून बनाकर किसान एवं गरीब वर्ग को ऋण से मुक्ति दिलाई गई है। हमारी सरकार भी इतना अवश्य कर सकती है कि किसानों को ऋण से छुटकारा दिलाने हेतु ऋण देने की समुचित व्यवस्था करे। किसान को एक साथ दो व्यक्तियों का ऋणी (सरकार व साहूकार का) रहने से कोई लाभ नहीं। कम पैदावार के समय वह किसको कर्जा लौटाएगा, सरकार को या साहूकार को ? जिसे नहीं देगा वह दावा करेगा, कुर्की करेगा। अतः आवश्यक है कि सरकार उसकी जमीन की कीमत को दृष्टि में रखकर उसकी ऋण सीमा निर्युक्त कर दे ताकि वह आवश्यकता के समय बैंक से कर्ज ले सके और चूंकि ऋण उसकी भूमि की जमानत पर दिया जाएगा अतः सरकार के ऋण को भी कोई खतरा नहीं होगा। दूसरे, जो साहूकार जमीन पर कुदृष्टि रखकर ऋण देते हैं वे देना बन्द कर देंगे तो उनका पैसा भी राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ाने के काम आएगा जो अब लोगों के शोषण के काम आता है।

उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त किसानों के ऋणग्रस्त होने के कारण उनमें व्याप्त सामाजिक कुरीतियां एवं मुकदमेबाजी है। इस क्षेत्र में सामाजिक संस्थाओं को आगे आकर काम करना होगा। विवाह शादी में कम खर्च करना, मृत्यु भोज आदि की प्रथा को बन्द करना व आपस में छोटी-छोटी बातों को लेकर कचहरी आदि में जाना ये कुछ बुराइयां हैं जिन्हें यदि दूर किया जाए तो किसान बहुत सा समय एवं धन बचा सकता है और वह खुशहाल होकर देश एवं समाज की अधिक सेवा कर सकता है तथा देश के नवनिर्माण में अधिक योगदान दे सकता है। भारत की खुशहाली किसान की खुशहाली है, क्योंकि आत्मा दुखी हो, तड़फती हो तो शरीर क्या कर्म करेगा।

श्रम के हाथ

घेर लेते हैं जब
काले मेघ, अन्धेरे और बिजलियां
चेतना पर बैठ जाती हैं
कुण्डली मार कर कुहरे की पर्त
फिजाओं में घुल जाती है
वीरान पतझड़ की बोझिल सांसें
और फुनगियों तक लटक आता है
मौसम का बईमान इरादा
श्रम के हाथ तब
पैनाते है कुदाल की नोकें
बांधते हैं हल की पोर-पोर से
अपने भीतर की अमृतधार
पनघट और अलगोझे,
वे न मांगते हैं कोई सूरज
कोई बसन्त
कोई जिन्दगी
उषा ही स्वयं
टांक जाती है द्वार पर बन्दनवार
और देहरी से
हार कर लौट जाता है
मौत का पहरेदार

डा० देवेन्द्र आर्य
ई 6/17 कृष्ण नगर
दिल्ली-110051

उन्नत कृषि एवं पशुपालन में प्रसार सेवा का महत्व

एम० फहीम उद्दीन,

सृष्टि के आदिकाल से ही भोजन मनुष्य की प्रारम्भिक आवश्यकता रही है और सदा-सर्वदा रहेगी। अपनी इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए मनुष्य कृषि और पशुपालन का धन्धा अपनाकर इनसे अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए सचेष्ट रहा है। प्रायः सभी देशों के किसानों ने अपनी खेती और पशुपालन से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए स्थानीय जलवायु, मिट्टी की बनावट, खाने-पीने की रुचियां और पद्धति को दृष्टिगत रखते हुए खेती और पशुपालन के तौर तरीके अपनाए हैं जो परम्परा के रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपनाए जाते रहे हैं। इस प्रकार हर देश के किसान खेती और पशुपालन के मामले में परम्पराओं से जुड़े हैं और वास्तविकता यही है कि परम्परा ही उनकी ठोस पूंजी है। यह कहना गलत होगा कि परम्परागत हर तकनीक त्याज्य है और नई तकनीकें, चाहें स्थान विशेष में कारगर हों या नहीं हो, ग्राह्य ही हैं। यही कारण है कि किसान और पशुपालक युग-युग से सहेजी गई परम्परागत पद्धतियों में शीघ्र परिवर्तन करने के लिए सदैव तत्पर नहीं रहते हैं। लेकिन इसके साथ ही यह कहना भी गलत होगा कि हमारे यहां के किसान और पशुपालक रूढ़िवादी हैं और वे अपनी रूढ़ियों को लाभ से भी अधिक महत्व देते हैं। सच्चाई यह है कि अपना हित-अहित पशु-पक्षी भी समझते हैं। हमारे किसान भी अपनी लाभ-हानि के मामले में पूर्ण रूप से सजग और सतर्क हैं। बस जरूरत इस बात की है कि उन्हें कौन-सी पद्धति, कौन सा तरीका अधिक लाभान्वित करने में सक्षम है, इस बात को सफलतापूर्वक समझा दिया जाए। मैं समझता हूं कि हमारे यहां प्रसार सेवा में रत कार्यकर्त्ताओं को यही कार्य करना है। भारत जैसे गणतन्त्री देश में यह कार्य कितना जटिल है, इसे प्रसार कार्यकर्त्ता भलीभांति समझ सकते हैं। निरंकुश सत्ता वाले राज्य में यह कार्य जोर जबर्दस्ती से अथवा कानून बना कर किया जा सकता था। लेकिन भारत एक आदर्श गणतन्त्र है, यहां पर शिक्षात्मक पद्धति अपनाकर और प्रत्यक्ष लाभ दिखा कर किसानों और पशुपालकों को खेती-पशुपालन के नए तौर-तरीके अपनाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

कृषि और पशुपालन-प्रसार क्षेत्र में सेवारत कार्यकर्त्ताओं को यह मान कर चलना होगा कि खेती और पशुपालन कला और विज्ञान—दोनों ही हैं। किसानों और पशुपालकों की खेती के प्रति निष्ठा, गहरा लगाव, स्वतः स्फूर्त सामाजिक सूझ और अथक परिश्रम आदि परम्परागत गुण इनका कलापक्ष है। दूसरी ओर अधुनातन अनुसन्धानों एवं शोधों से प्राप्त तकनीक, उपकरण आदि खेती और पशुपालन शास्त्र के वैज्ञानिक पक्ष हैं। सफल प्रसार कार्यकर्त्ता इन दोनों का समुचित समन्वय करने के सिद्धान्त पर बल देते हुए किसानों को नई तकनीक अपनाने के लिए प्रेरित कर कृषि और पशुपालन के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकता है। वह तमाम उपयोगी परम्पराओं को, जिन पर वैज्ञानिक कृषि-पशुपालन पद्धति की इमारत खड़ी की जा सकती है, सहज रूप से स्वीकार्य मानते हुए किसानों और पशुपालकों में जागरण ला सकता है।

कृषि एवं पशुपालन के सन्दर्भ में प्रसार कार्य की चर्चा करते समय इस बात को नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता कि प्रसार एवं प्रचार (प्रोपेगंडा) में मौलिक अन्तर है। प्रोपेगंडा शब्द की उत्पत्ति वैटिकन के रोमन कैथोलिक चर्च के एक संस्थान से हुई है और आरम्भ में इसका मुख्य उद्देश्य उनके धर्म और नीति का प्रचार करना था। प्रकारान्तर से प्रोपेगंडा का उपयोग किसी भी व्यावसायिक, धार्मिक, राजनैतिक, सैनिक उद्देश्य की सिद्धि के के लिए किया जाने लगा। बीसवीं सदी के तानाशाहों ने प्रोपेगंडा का इस्तेमाल अपना मकसद हासिल करने के महत्वपूर्ण हथियार के रूप में किया और और प्रोपेगंडा फैलाने के लिए फौजी ताकत का सहारा भी लिया। इसी प्रकार पिछले दोनों महायुद्धों में प्रोपेगंडा ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि प्रोपेगंडा जनसाधारण के हित में हो। पब्लिसिटी (प्रचार) भी किसी बात को बहुत सारे लोगों की जानकारी में ला देने के उद्देश्य ही पूरा कर पाती है। इनके विपरीत, प्रसार जनहित के लिए किसी उद्देश्य की सिद्धि के निमित्त एक सुनियोजित प्रयास है, जिसमें प्रचार तत्व निहित है। इस तरह कृषि एवं पशुपालन प्रसार सेवा एक सुनियोजित पद्धति है जो शिक्षात्मक ढंग से ग्रामीण कृषकों एवं पशुपालकों को कृषि-पशुपालन के वैज्ञानिक तरीके अपनाने के लिए प्रेरित करती है, ताकि उनकी कार्यक्षमता का उत्तरोत्तर विकास होता रहे, कृषि-उत्पादन बढ़ता रहे और उनके सामाजिक तथा आर्थिक स्तर उच्चतर तथा सुदृढ़ बनें। कृषि प्रसार किसानों और पशुपालकों को स्वयं अपनी सहायता करने के लिए अनुप्राणित करता है।

उपर्युक्त वर्णित तथ्यों से निष्कर्ष निकलता है कि कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में प्रसार कार्यों की सफलता किसान, पशुपालक, कृषि-पशुपालन विशेषज्ञ तथा प्रसार कार्यकर्त्ताओं के पारस्परिक ताल-

मेल पर विशेष रूप से निर्भर करती है। इनमें किसान और पशुपालक तो अपने लाभ की बातें अपनाने को सदैव प्रस्तुत रहते हैं। इसलिए प्रसार कार्यकर्त्ताओं और वैज्ञानिकों का काफी अधिक उत्तरदायित्व है। यहां यह कहना भी गलत नहीं होगा कि वैज्ञानिकों का उत्तरदायित्व सबसे ज्यादा है, क्योंकि उनके द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री ही प्रसार कार्य का आधार बनती है। ऐसी स्थिति में इन क्षेत्रों में कार्यरत वैज्ञानिकों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे किसानों एवं पशुपालकों की वास्तविक समस्याओं से सम्बद्ध विषयों पर शोध करें। साथ ही, उनके शोध स्थानीय परिवेश को दृष्टिगत रखते हुए किए जाएं। आज कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में स्थापित कुछ संस्थानों में विदेशों में किए गए अनुसन्धानों को उतार लाने की होड़ सी मची है। हो सकता है कि विदेशों में किए अनुसन्धान सम्बन्धित देशों के लिए फायदेमन्द होने के बावजूद भारतीय परिवेश में अनुकूल नहीं पड़ते हों। इस कथन का तात्पर्य यह नहीं है कि विदेश में किए गए सभी अनुसन्धान इस देश के लिए प्रतिकूल हैं। यहां इस बात का उल्लेख करने का आशय मात्र इतना है कि विदेशों के अनुसन्धानों को यहां पर प्रसारित करने के पूर्व यहां की स्थानीय समस्याओं और माहौल को दृष्टिगत रखते हुए उनकी अनुकूलता की जांच होनी चाहिए। किसानों की स्थानीय समस्याओं की सही-सही जानकारी हासिल करने के लिए वैज्ञानिकों को भी प्रसार कार्यकर्त्ताओं की अहमियत को महसूस करना चाहिए और किसानों तथा पशुपालकों की समस्याओं से सम्बद्ध विषयों पर अनुसन्धान कर उनका क्षेत्रीय प्रयोग करने के तुरन्त बाद प्रसार कार्यकर्त्ताओं के माध्यम से किसानों और पशुपालकों को ठोस परिणाम की ओर आकर्षित करना चाहिए।

प्रसार द्वारा कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाने के लिए योग्य प्रसार कार्यकर्त्ताओं का चुनाव भी विशेष महत्व रखता है। प्रसार कार्यकर्त्ता को कृषि एवं पशुपालन से सम्बद्ध विषयों की जानकारी तो होनी ही चाहिए, साथ ही उसे किसानों और पशुपालकों की परम्पराओं, सामाजिकता तथा समस्याओं का पूरा-पूरा ज्ञान उपलब्ध रहना चाहिए। उसे किसानों की भाषा में बातचीत करने की पूरी क्षमता होनी चाहिए तथा जहां तक सम्भव हो, वह कृषकों एवं पशुपालकों के समाज में घुल-मिल कर काम कर सकने योग्य हो। प्रसार कार्य में सफलता और कार्य को बार-बार दुहराने-तिहराने की आवश्यकता होती है। विभिन्न स्तर के प्रसार कार्यकर्त्ताओं को अपने को किसानों और पशुपालकों के बीच बन्धु या सखा की भांति प्रस्तुत करना चाहिए। उन्हें अपने प्रयासों से अपने को कृषक समाज के लिए उपयोगी सिद्ध करना होगा और उनके मनोवैज्ञानिक धरातल को दृष्टिगत रखते हुए वैज्ञानिक तथा प्रावैधिक पद्धतियों का प्रचार-प्रसार करना होगा। किसी भी प्रसार कार्यकर्त्ता की सफलता का मापदण्ड उससे सम्बद्ध क्षेत्र की समृद्धि और आर्थिक प्रगति ही है। इसलिए प्रसार कार्यकर्त्ता को सदैव इस लक्ष्य को दृष्टिगत रख कर ही काम करना होगा। तर्कों से अपनी उपादेयता सिद्ध करना प्रसार कार्यकर्त्ता के लिए समीचीन नहीं होता है।

कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में प्रसार कार्य के लिए जनसंचार के सभी साधनों का उपयोग करना पड़ता है। भारत में प्रसार कार्य करने के लिए जो साधन उपलब्ध हैं, उनमें आकाशवाणी, प्रेस, समाचार-पत्र, चलचित्र प्रदर्शन, सामूहिक स्थलों पर प्रदर्शनी का आयोजन, क्षेत्रीय प्रत्यक्षण आदि प्रमुख हैं। लेकिन ज्यादातर किसानों एवं पशुपालकों का वर्तमान शैक्षणिक स्तर देखते हुए व्यक्तिगत एवं सामूहिक सम्पर्क इन सबसे ज्यादा कारगर और महत्वपूर्ण हैं। प्रसार कार्यकर्त्ताओं को अधिक से अधिक किसानों और पशुपालकों से व्यक्तिगत सम्पर्क कर सकने की सुविधा उपलब्ध कराना अनिवार्य है। साथ ही उन्हें आकाशवाणी और समाचार पत्रों का सहयोग भी मिलना चाहिए। मनोरंजन के माध्यम से शिक्षात्मक चलचित्रों का प्रदर्शन कृषक समाज में काफी लोकप्रिय सिद्ध हुआ है और इस माध्यम से भविष्य में बड़ी-बड़ी आशाएं की जा सकती हैं। पशुपालन के क्षेत्र में पशुपालकों के बीच स्वस्थ स्पर्धा का भाव जाग्रत करने और उन्हें पशुपालन के उन्नत तौर-तरीकों की जानकारी उपलब्ध कराने में पशु-प्रदर्शनियों की उपयोगिता सर्वविदित है। मेलों और प्रदर्शनियों में प्रदर्शन-मण्डप संस्थापित कर कृषि एवं पशुपालन की उपलब्धियों से किसानों को अवगत कराते हुए उन्हें कृषि एवं पशुपालन के उन्नत तौर-तरीके अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना भी प्रसार का एक सशक्त माध्यम है। लेकिन आमतौर पर प्रदर्शनियों में सजावट को विशेष महत्व देकर ऐसी चकाचौंध पैदा किया जाता है कि अधिकतर दर्शक उसमें भ्रमित होकर मूल बात से अलग-थलग हो कर तमाशबीन बन कर रह जाते हैं। व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर लेखक यह कह सकने की स्थिति में है कि ऐसी प्रदर्शनियां किसानों और पशुपालकों को आकर्षित जरूर करती हैं, लेकिन उन्हें इनमें काम की बातें सीखने-समझने के बहुत कम अवसर प्राप्त होते हैं। एक ऐसी प्रदर्शनी में कुछ किसानों से यह पूछे जाने पर कि प्रदर्शनी आपको कैसी लगी, किसानों ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। लेकिन जब यह पूछा गया कि आपने क्या सीखा-समझा तो 90 प्रतिशत दर्शकों ने उत्तर नहीं दिया और शेष ने नकारात्मक उत्तर दिया। इसलिए ऐसी प्रदर्शनियां 'द्वारका में सुदामा भल गए' वाली कहावत चरितार्थ करती हैं। कहने का आशय यह नहीं है कि प्रदर्शनियों में सजावट हो ही नहीं, लेकिन इसकी अतिशयता से बचना चाहिए और इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रसार-प्रदर्शनी कला प्रदर्शनी न बन जाए।

शिक्षा के क्षेत्र में योजनाबद्ध ढंग से कार्य करने के फलस्वरूप किसानों और

पशुपालकों में साक्षरता बढ़ती जा रही है। इसका लाभ प्रसार कार्यकर्त्ताओं को उठाना चाहिए तथा गांव-गांव में गोष्ठियों का आयोजन कर उनकी बात सुनने और उन्हें विशेषज्ञों से उत्तर दिलाने का कार्यक्रम चलाना चाहिए। साक्षरता बढ़ जान के कारण प्रसार साहित्य भी प्रसार का महत्वपूर्ण साधन बन गया है। कृषि एवं पशुपालन से सम्बद्ध विभिन्न विषयों पर प्रकाशित कराए गए सूचनात्मक एवं शिक्षात्मक प्रसार साहित्य किसानों और पशुपालकों के बीच काफी लोकप्रिय हो रहे हैं और इनकी मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है। प्रसार साहित्य तैयार करने वाले कार्यकर्त्ताओं को किसानों के लिए सहज बोधगम्य भाषा में ही प्रसार साहित्य का प्रारूपण करना चाहिए तथा ऐसे साहित्य की रूपरेखा भी आकर्षक होनी चाहिए। साथ ही किसानों को प्रशिक्षण की एवं देश के विभिन्न कृषि एवं पशुपालन संस्थानों को देखने की सुविधा भी प्राप्त होनी चाहिए।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के कार्यान्वयन से अब तक कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में प्रसार कार्य किए जाते रहे हैं। इसके बावजूद कृषि एवं पशुपालन के लिए अपनाए जा रहे तौर-तरीकों और विज्ञान एवं प्रावैधिकी के क्षेत्र में प्राप्त उपलब्धियों पर आधारित कृषि में स्पष्ट अन्तर है। भारत के ही विभिन्न राज्यों में यह विषमता देखी जा सकती है। सम्भवतः यही कारण है कि खाद्यान्न एवं पशु-उत्पादनों के मामले में हम पूरी तरह से आत्मनिर्भर नहीं हो सके हैं। यदि विज्ञान एवं प्रावैधिकी के क्षेत्रों की उपलब्धियां प्रसार के माध्यम से सभी राज्यों के किसानों तक पहुंचाई जातीं तो भारत के विभिन्न राज्यों के उत्पादन में इतनी विषमता नहीं रहती। कृषि के हरित क्रान्ति और पशुपालन के क्षेत्र में अधिक उत्पादन अभियान की वांछित सफलता के लिए प्रसार कार्यों को और भी सशक्त और सुदृढ़ करने की जरूरत है। कुछ दिन पूर्व स्टेट्समैन ने अपने अग्रलेख (20 दिसम्बर 68) में इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा संचालित सर्वेक्षण का हवाला देते हुए लिखा था कि "इलाहाबाद नगर से मात्र 23 मील की दूरी पर बसने वाले किसानों को ग्रामीण-आर्थिक परियोजनाओं की जानकारी नहीं थी और वे इस ओर से सर्वथा उदासीन थे।" इससे पता चलता है कि कृषि तथा पशुपालन प्रसार की दिशा में काफी आगे बढ़ने की जरूरत अब भी बनी है। हमें खाद्य पदार्थों का उत्पादन बढ़ा कर आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए प्रसार कार्यों के महत्व को समझते हुए इसे प्राथमिकता देनी ही होगी। ऐसा करके ही नवजागरण का सन्देश गांव-गांव तक पहुंचाया जा सकेगा। □

खाद्य पदार्थों में मिलावट का पता लगाएं

□ नरेन्द्र अवस्थी

आजकल बाजार में ज्यादातर खाने-पीने की चीजें मिलावट की मिलती हैं। दूध, घी, तेल, मसाले बिना मिलावट के मुश्किल से मिल पाते हैं। यदि थोड़ी सावधानी बरती जाए और मिलावट मालूम करने की जानकारी हो तो तुरन्त पता चल जाएगा कि कौन सी चीज मिलावट वाली है। उसे खरीदने से बचा जा सकता है।

घी की जांच

वनस्पति के बन्द डिब्बों में भी अक्सर मिलावट कर दी जाती है। देशी घी में वनस्पति घी मिलाकर बेचना तो बहुत आसान हो गया है। 10 सी०सी० हाइड्रोक्लोरिक एसिड में एक छोटी चम्मच चीनी डालें। फिर 10 सी०सी० पिघला घी मिलाए और एक मिनट तक खूब हिलाएं। फिर 10 मिनट तक जमने दें। यदि वनस्पति घी में मिलावट होगी तो पानी वाली सतह का रंग लाल हो जाएगा।

हल्दी की जांच

पिसी हल्दी में पीला मेटीनल पाउडर मिला दिया जाता है जिसे खाने से खून की कमी और पीलिया रोग हो जाते हैं। स्त्रियों को गर्भ भी गिर सकता है। मिलावट की जांच के लिए घनीभूत हाइड्रोक्लोरिक एसिड मिलाने पर हल्दी का रंग बैंगनी हो जाएगा। यदि मिलावट नहीं है तो रंग गायब हो जाएगा और पीला मेटानिल की मिलावट है तो रंग वैसा ही रहेगा।

लाल मिर्च की जांच

लाल मिर्च में मिलावट जांचने के लिए थोड़ी पिसी मिर्च पानी में डालें। रंग घुलने लगे और बाकी चीज तैरती रहे तो समझें मिलावट है। शायद लकड़ी का बुरादा रंगकर मिलावट की गई है।

काला जीरा की जांच

काला जीरा हाथ से मलें। यदि हाथों में रंग लग जाए तो समझें मिलावट है।

चाय की जांच

अक्सर मिलावट के लिए उबली चाय की पत्तियां सुखाकर और पीस कर उन्हें रंग दिया जाता है। इसका पता लगाने के लिए गीले सफेद कागज पर चाय का चूरा छिड़के। पीला, गुलाबी और लाल रंग कागज पर उभर आए तो समझें चाय बेकार है।

गुड़ की जांच

गुड़ में पीला मेटानिल मिला हो तो गुड़ के घोल में हाइड्रोक्लोरिक एसिड मिलाएं। यदि रंग बैंगनी हो जाए तो समझें मिलावट है।

दूध की जांच

दूध में पानी की मिलावट का पता लगाने के लिए दूध को लेक्टोमीटर से जांचें। शुद्ध दूध का दुग्ध-मान 1030 से 1034 होता है। कई चतुर मिलावटिए दूध में ऐसी चीज मिला देते हैं जिससे पानी मिलाने पर भी दुग्ध-मान घटता नहीं। दूध में चिकनाई का पता लगा कर मिलावट पकड़ें। शुद्ध दूध हाथ में लगाने पर चिपचिपा सा लगता है।

('सेवाग्राम' से साभार)

मत्स्य उद्योग विकास की ओर

विनोद कुमार मिश्र

देश के तटीय भागों में मत्स्य उद्योग तेजी से विकसित हो रहा है। विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाले उद्योगों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। पहले की अपेक्षा अब इस उद्योग से अधिक विदेशी मुद्रा अर्जित की जाने लगी है। 1968-69 में इस उद्योग से 22.7 करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा अर्जित की गई थी जोकि 1969-70 में बढ़कर 30.81 करोड़ रु० तथा 1970-71 में 35.07 करोड़ रु० और 1971-72 में 44.55 करोड़ रु० हो गई। भविष्य में भी इस उद्योग से और अधिक विदेशी मुद्रा प्राप्त होने की आशा है।

विगत कुछ वर्षों से खाद्यान्नों की भारी कमी के कारण मत्स्य उपभोग बढ़ाने पर जोर दिया गया है। चूंकि मछलियां प्रोटीन का प्रमुख स्रोत हैं अतः इन्हें आहार का मुख्य अंग माना जाता है। खाद्यान्नों की जगह मत्स्य उपभोग को बढ़ावा दिया गया है। अन्य देशों की तुलना में हमारे देश में मत्स्य उपभोग की मात्रा अत्यन्त कम है। जहां जापान में 70 पौंड, बर्मा में 60 पौंड, लंका में 16 पौंड मत्स्य उपभोग की मात्रा है वहीं हमारे देश में यह मात्र 3 पौंड है। लोगों में मत्स्य उपभोग की मात्रा बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि मत्स्य उत्पादन में वृद्धि की जाए। वैसे स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् मत्स्य उत्पादन में वृद्धि होती रही है किन्तु इसे पर्याप्त नहीं कहा जा सकता। 1949 में 5.46 लाख टन मत्स्य उत्पादन हुआ था जो 1960 तक बढ़कर 11.60 लाख टन हो गया। 1965 में 13.31 लाख टन मत्स्य उत्पादन हुआ था जो कि 1969 तक बढ़कर 16.05 लाख टन हो गया जिसका मूल्य 165 करोड़ रु० था। 1969 तक सामुद्रिक स्रोतों से मत्स्य उत्पादन में कहीं वृद्धि हुई है। इस अवधि में मत्स्य उत्पादन 8.24 लाख टन से 9.12 टन तक बढ़ गया। आन्तरिक स्रोतों से मत्स्य उत्पादन 5.07 लाख टन से बढ़कर 6.93 लाख टन हो गया। 1971 में मत्स्य उत्पादन 18.45 लाख टन हुआ था। इसमें से सामुद्रिक स्रोतों से 11.55 लाख टन तथा आन्तरिक स्रोतों से 690 लाख टन हुआ। 1972 में होने वाले मत्स्य उत्पादन में पहले वर्ष की अपेक्षा 1 लाख टन की वृद्धि हुई है और यह वृद्धि केवल सामुद्रिक स्रोतों से होने वाले मत्स्य उत्पादन में हुई है। 1973-74 में मत्स्य उत्पादन 22.67 लाख टन हुआ। सामुद्रिक स्रोतों से उत्पादन बढ़कर 14.84 लाख टन तथा आन्तरिक स्रोतों से 7.85 लाख टन हो गया। देश के 5,689 किलोमीटर लम्बे तटीय क्षेत्र में कोचीन, मद्रास, बम्बई, कलकत्ता आदि बन्दरगाहों से मत्स्य उत्पादन बढ़ाने पर विशेष जोर दिया गया है।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना में मत्स्य उद्योग के विकास के लिए पर्याप्त धन राशि के साथ ही विशेष लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं। मत्स्य उद्योग के विकास पर 159-45 करोड़ रु० व्यय करने का प्रावधान है। साथ ही 1973-74 में जो मशीनी नौकाएं, मछली पकड़ने वाले जहाज, मत्स्य बीज और मत्स्य पालन क्षेत्र की संख्या क्रमशः 9,300, 100, 1,888 मीट्रिक टन तथा 922 हेक्टेयर थी वह 1978-79 तक बढ़कर क्रमशः 13,300, 300, 4,256 मीट्रिक टन तथा 1,722 हेक्टेयर होने की आशा है। इसके पूर्व चतुर्थ योजना काल में घोषित लक्ष्यों को पूरा करने का प्रयास किया गया। मत्स्य उद्योग के समुचित विकास के लिए इस योजना में 82.71 करोड़ रु० व्यय किया गया। इसमें से 1969-70 में 7.62 करोड़ रु० 1970-71 में 10.57 करोड़ रु० तथा 1971-72 में 13.19 करोड़ रु० व्यय किया गया। कुछ ऐसे बन्दरगाहों पर सुधार कार्य किया गया जहां बड़े पैमाने पर मत्स्य उत्पादन होता है। इसमें से कोचीन बन्दरगाह पर 2.72 करोड़ रु० तथा पश्चिम बंगाल के रायचौक बन्दरगाह पर 1.51 करोड़ रु० व्यय किया गया। मत्स्य उद्योग को मशीनीकरण का जामा पहनाने के लिए 'स्टेट प्लान स्कीम' के अन्तर्गत कुछ कार्यक्रमों को निर्धारित किया गया। चतुर्थ योजनाकाल में मशीनी नौकाएं, मध्यम आकार वाले ट्रालरों और रेफ्रीजेरेटेड रेलवानों की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई। 1971-72 में मशीनी नौकाएं 955 थीं जो कि मार्च 1973 तक बढ़कर 10,698 हो गई तथा मध्यम आकार वाले ट्रालरों एवं रेफ्रीजेरेटेड रेलवानों की संख्या 1968-69 में क्रमशः 25 एवं 9 थी जो कि 1973-74 तक बढ़कर क्रमशः 300 एवं 20 हो गई। मत्स्य बीज तथा मत्स्य पालन क्षेत्र का भी विकास करने का लक्ष्य इस योजना में निर्धारित किया गया था। योजना में 1,153 हैक्टेयर नर्सरी एरिया बनाने का लक्ष्य था। मार्च 1972 तक 900 हैक्टेयर नर्सरी एरिया बना लिया गया था। प्रथम तीन पंचवर्षीय योजनाओं में भी मत्स्य उद्योग के विकास पर ध्यान दिया गया था। प्रथम योजना में इस हेतु 5 करोड़ रु०, द्वितीय में 12 करोड़ रु० तथा तृतीय योजना में 22.5 करोड़ रु० व्यय किया गया। छोटे बन्दरगाहों का विकास करने की दृष्टि से इन स्थानों पर रिपेयर वर्कशाप, शीतगृह, बर्फ बनाने के कारखाने आदि लगाए गए हैं। अन्वेषण सम्बन्धी कार्यक्रम को प्रोत्साहन दिया गया। इस तरह मत्स्य उद्योग के समुचित विकास पर प्रथम योजना से ही ध्यान दिया गया है और यह आशा की जाती है कि पांचवीं योजना में जो लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं वे पूरे हो जाएंगे।

□

व्याख्याता (वाणिज्य)
हमीदिया महाविद्यालय भोपाल

श्री हरिबाबाजी—लेखक : श्री ललिता प्रसाद; प्रबन्ध सम्पादक : श्री सुरेन्द्र अग्रवाल; प्रकाशक : रचना राकेश, 2563, नाई वाड़ा, चावड़ी बाजार, दिल्ली-6; प्राप्ति स्थान : श्री हरेकृष्णजी ब्रह्मचारी, श्री हरिबांध धाम, पो० गवां, जिला बदायूं, उत्तर प्रदेश; मूल्य : 15 रुपये; पृष्ठ : 1032।

प्रस्तुत आलोच्य पुस्तक प्रातः स्मरणीय स्वनामधन्य श्री हरिबाबा जी का पावन चरित्र है, जिसमें विद्वान लेखक ने उनके समीप रह कर बाबा के जीवन दर्शन का प्रत्येक दृष्टिकोण से सूक्ष्म अध्ययन किया है। लेखक की लेखन-कला का उतना चमत्कार पुस्तक में नहीं है, जितना बाबा के प्रति उनकी श्रद्धा, निष्ठा तथा विश्वास से छलकते हुए प्राणवान् तथा स्फूर्तिदायक प्रेरक प्रसंग हैं। ऐसा इसलिए बन पड़ा है कि लेखक ने लेखक न होकर बाबा के अनन्य भक्त तथा अविचल विश्वासी सेवक के रूप में इस पवित्र चरित्र को लिखने का प्रयास किया है।

बाबा का जीवन अथ से इति तक एक ऐसी विचारधारा को लेकर चला है जिसमें ज्ञान, भक्ति और कर्म की त्रिवेणी की उत्ताल तरंगें उठती दिखाई देती हैं। जब जहां जिस भाव का प्रसंग आया है, वहां उस भाव की पराकाष्ठा दिखाई देती है। ज्ञान-वेदान्त के प्रसंग में जहां बाबा का निःसंग, विरक्त रूप देखने को मिलता है, वहीं जब ज्ञान से भक्ति मार्ग पर चलने का निश्चय होता है, तब गौरांग प्रभु की भांति हरिनाम-संकीर्तन की ध्वनि चारों ओर गुंजा कर शिक्षित-अशिक्षित जनता को प्रभु नाम के रस-प्रवाह में आकण्ठ मग्न कर देती है।

ज्ञान और भक्ति तो बाबा के जीवन के प्रमुख रूप हैं ही किन्तु उन्होंने अपने जीवन में कर्म का जो आदर्श उपस्थित किया है, उससे तो लगता है बाबा का सारा जीवन कर्म को ही समर्पित था।

प्रस्तुत पुस्तक आदि खण्ड, लीला खण्ड, बांध खण्ड, उत्सव खण्ड तथा उत्तर खण्ड इन पांच खण्डों में विभाजित है। प्रत्येक खण्ड की अपनी विशेषता है। इन खण्डों में चार खण्ड जहां पूज्य बाबा की ज्ञान-वैराग्य, भक्ति तथा हरिनाम संकीर्तन की महत्ता प्रतिपादित करते हैं, वहां बांध खण्ड बाबा के कर्मयोग का प्रतिपादक है। वस्तुतः बांध ही बाबा का ऐसा अपूर्व आदर्श कर्म है, जिसे देख सुन कर बाबा के प्रति मानव-मन अपार श्रद्धा से भर जाता है। गंगा की बाढ़ से प्रतिवर्ष सैकड़ों गांवों में जल-प्रलय का दृश्य उपस्थित हो जाता था, जिससे धन-जन और पशुओं की अपार क्षति होती थी। उस प्रलयंकर दृश्य को देख कर बाबा का हृदय द्रवीभूत हो जाता है और वे मन में दृढ़ संकल्प कर लेते हैं कि इस प्रलय को रोकना होगा। बाबा के इस दृढ़ संकल्प में वहां की ग्रामीण जनता तन-मन-धन से जुट जाती है। बाबा स्वयं बांध पर मिट्टी डालते हैं और एक दिन ऐसा आता है जब बांध बन कर तैयार हो जाता है। जो काम सरकार नहीं कर सकी, जिसके पास अपार साधन थे, असंख्य इंजीनियर थे, वही काम बाबा ने हरि नाम के सहारे कर दिखाया। ऐसा है हरिनाम का चमत्कार!

पुस्तक में वर्णित अनेक बातें बड़ी आश्चर्यजनक तथा प्रभावोत्पादक हैं। मुख्य रूप से भक्ति मार्ग पर चलने वाले भक्तों के लिए पुस्तक बहुत उपादेय है। बाबा के भक्तों के लिए तो यह ग्रन्थ रामायण आदि धर्म ग्रन्थों की भांति समादरणीय है।

कुछ स्थलों पर पुनरुक्ति मालूम देती है किन्तु इसमें लेखक का आशय अधिक से अधिक विशद रूप में पूज्य बाबा का चरित्र उनके भक्तों के समक्ष प्रस्तुत करना ही रहा है।

पुस्तक में कहीं भी किसी सम्प्रदाय विशेष के प्रति बाबा का पक्षपात दृष्टिगोचर नहीं होता, अपितु अन्य धर्म या सम्प्रदायों के साथ बाबा की सर्वधर्म समभावना समन्वय के रूप में दिखाई देती है।

पुस्तक की छपाई सुन्दर है। कहीं-कहीं साधारण प्रूफ की भूलें रह गई हैं। वैसे पुस्तक धर्मग्रन्थ की भांति पठनीय, मननीय और संग्रहणीय है। टाईप मोटा है जिससे पढ़ने में सुगमता रहती है।

पुस्तक-प्रकाशन में जिन-जिन व्यक्तियों का सहयोग रहा है, वे सब बाबा के जीवन-काल से ही उनके विश्वास-भाजन रहे हैं। अतः ऐसी सुन्दर रचना के प्रकाशन के लिए वे सब बधाई के पात्र हैं।

गंगाशरण शास्त्री
13/6 **सेवानगर रेलवे कालोनी,**
नई दिल्ली-3

प्रेम की देवी—लेखक : लक्ष्मी निवास बिड़ला; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली; पृष्ठ संख्या : 154; मूल्य : छः रुपए।

उपन्यास समाज का प्रतिबिम्ब होता है। चरित्र-चित्रण, घटनाक्रम और संवादों के माध्यम से समाज की यथासम्भव जीवन्त झांकी प्रस्तुत करना ही उपन्यासकार का ध्येय होता है। यही उपन्यास की सफलता-असफलता की कसौटी भी है। प्रस्तुत ऐतिहासिक उपन्यास "प्रेम की देवी" में राजपूतों की शौर्य परम्परा, देशभक्ति, अनुपम साहस और स्वाधीनता-प्रेम का सजीव चित्रण है। इस उपन्यास की पृष्ठभूमि राजस्थान की वीर-भूमि है और इसमें "कोड़म दे" की वीरता की कहानी है।

यह राजपूत नारी अद्वितीय सुन्दरी होने के साथ ही साहसी और निडर भी थी तथा उसमें चरित्र बल था। नैतिक चरित्र के बल पर ही उसने अपने पिता की बात मानने से इन्कार कर दिया। उसके पिता माणिकराव उसकी शादी अरंकमल राठौड़ से करना चाहते थे, क्योंकि वे राठौड़ों को नाराज नहीं करना चाहते थे। पर, कोड़म दे ने स्पष्ट रूप से कह दिया कि वह केवल 'वीर सादू' से ही ब्याह करेगी। उसकी बात आखिर माणिकराव को माननी ही पड़ी।

वीर नारियां जिस मनुष्य को पति रूप में एक बार वरण कर लेती है उसे ही वे अन्त तक अपना पति मानती हैं, यही कोड़म दे की भी आस्था थी जिसे उसने प्राणों की बलि देकर भी निभाया। कोड़म दे नहीं रही पर उसका नैतिक बल उसे अमर कर गया।

उपन्यास में माणिकराव की देशभक्ति और नारी की भावनाओं के प्रति आदर का वर्णन है। सादू के चरित्र के द्वारा वीरोचित भावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति की गई है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में लिखे गए इस कथानक में अरंकमल का चरित्र भी बिल्कुल फिट बैठता है। इतिहास में ऐसे खलनायकनुमा चरित्रों की भरमार है जो सत्ता और शक्ति के घमण्ड में आकर नैतिक और मानवीय मूल्यों को ताक पर रख देते हैं। अरंकमल भी इसी श्रेणी का राठौड़ राजा था और केवल अपनी हठ पूरी करने के लिए निरन्तर कोड़म दे के अपहरण और वीर सादू की हत्या करने का प्रयत्न करता रहता था। अन्त में उसने अवसर पा ही लिया और 'वीर सादू' को द्वन्द्वयुद्ध में मार गिराया। हां, अपनी कुचेष्टा में सफल होने का सुख भोगने के लिए वह भी नहीं बचा और शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो गया। परन्तु धन्य थी वह वीर राजपूतनी 'कोड़म दे' जिसने स्वयं अपने वीर पति को अरंकमल से द्वन्द्वयुद्ध की सलाह दी और उसके धराशायी हो जाने पर अरंकमल को भाई बनाकर तथा अपने हाथ कटवाकर सती हो गई।

नारी की एक स्वभावगत कमजोरी है कि जिस पुरुष से वह प्रेम करती है उसे अन्य स्त्री से प्रेम करते वह नहीं देख सकती। इस मनोवैज्ञानिक तथ्य की अभिव्यक्ति इस उपन्यास में बहुत ही सुन्दर ढंग से की गई है। माणिकराव पठानों को युद्ध में परास्त करके शहजादी अजीजा को अपने संरक्षण में ले आए थे। उनका विचार था कि अजीजा 'कोड़म दे' की अच्छी सखी बन सकेगी। पर, संयोगवश अजीजा भी "वीर सादू" को अपना मन हार बैठी और अपने मन के हाथों मजबूर होकर सतत् ऐसी चेष्टाएं करती रही कि 'कोड़म दे' उसके रास्ते से हट जाए। यहां तक कि वह तान्त्रिक भैरव के चक्कर में आ गई। "कर बुरा हो बुरा"। अन्ततः अजीजा को भी सद्बुद्धि तभी आई जब वह अपने ही बिछाए जाल में बुरी तरह फंस गई और मरणान्तक पीड़ाएं और यातनाएं सह चुकी। यह प्रेम के त्रिकोण की अभिव्यञ्जना है जो उपन्यास के कथा-प्रवाह में इस प्रकार घुलमिल गई है जैसे रोगनाशक औषधि में विषाक्त जड़ी-बूटियां। यह आख्यान मुख्य-आख्यान में कतई भी विक्षेप या व्याघात नहीं लाता, बरन् उसे रोचक और रोमांचपूर्ण बनाता है।

उपन्यास की भाषा में राजस्थानी भाषा का पुट है, उसमें आद्योपान्त प्रवाह है। घटनाचक्र एक सूत्र में बंधा हुआ है और चरित्र चित्रण तो बहुत सजीव है। उपन्यास के तत्वों का निर्वाह पूर्ण रूप से किया गया है। यद्यपि आजकल उपन्यासों की विधा बदल गई है, तथापि यह उपन्यास बहुत ही सुरुचिपूर्ण बन पड़ा है। बच्चों और युवकों के चरित्र-निर्माण के लिए ऐसे उपन्यास एक सुदृढ़ आधार बन सकते हैं, इसमें कतई दो मत नहीं हो सकते।

उपन्यास का मुखपृष्ठ बहुत ही उपयुक्त और आकर्षक है। छपाई-सफाई भी अच्छी है। इसका मूल्य छः रुपए अवश्य कुछ अधिक लगा, हालांकि आजकल हर ओर बढ़ते मूल्यों और कागज की कमी को देखते हुए शायद यह अनुचित नहीं है। सुरुचिपूर्ण पाठक इसे पढ़कर सन्तुष्ट ही होगा।

विश्व भूषण कृष्ण
25/155, न्यू डबल स्टोरी,
लाजपतनगर IV
नई दिल्ली-110024

माटी हो गई सोना—लेखक : विनोद विभाकर; प्रकाशक : कला प्रकाशन मन्दिर, 2538 धर्मपुरा, दिल्ली-6; मूल्य दो रुपया पचास पैसा।

'माटी हो गई सोना' पुस्तक की रचना अनूठी शैली में करके श्री विनोद विभाकर ने माटी के महत्व को दर्शाने का प्रयत्न किया है। लेखक ने किसान की माटी बता कर उद्योगपति की सम्पत्ति तक इसे बताया है।

बाल साहित्य के लिए यह पुस्तक उपयोगी है। इसे पढ़ने से पता चलता है कि कल तक जिन चीजों को हम कूड़ा-करकट (माटी) समझ कर फेंक देते थे अथवा व्यर्थ नष्ट कर देते थे आज विज्ञान और उद्योग के बल से सोना बन सकती है।

नई भावपूर्ण शैली में पुस्तक का प्रकाशन आकर्षक एवं कलापूर्ण हो गया है। काला कलूटा जादूगर, नन्हे कीड़े की देन, धरती का अनमोल खजाना, पहियों की जान, मशालों का राजा, नाम छोटा काम बड़ा और माटी की तोल कितना अनमोल शीर्षक लेख सचित्र होने के कारण ज्ञानवर्धक बन पड़े हैं।

यदि यही पुस्तक कुछ और बड़ी होती तथा कुछ अन्य कूड़ा-करकट (माटी) जैसी चीजों की भी चर्चा विस्तार से होती तो उत्तम रहता क्योंकि यह पुस्तक बाल साहित्य के स्तर की है इसलिए लेखक इस उत्तम रचना के लिए बधाई के पात्र हैं।

मदन 'विरक्त'
24, ईस्ट अंगद नगर, दिल्ली-51

कहानी

पढ़ाई दो दरजे की

शीतांशु भारद्वाज

बैसाख की तपती हुई दुपहरी। गांव-वाले गेहूं की कटाई-मंडाई के लिए खेतों खेलिहानों में गए हुए हैं। घरों में सुनसानी छाई हुई है। मास्टर लीलाधर ने दूर-दूर तक बिखरे हुए सीढ़ीनुमा खेतों की ओर देखा और समीप के सेमल वृक्ष के नीचे जा बैठा। इस गांव में आने का उसे भारी पछतावा हो रहा था। उसे लगा जैसे यहां आकर उसने भारी भूल की हो। उसके कानों में पट्टी-पटवारी के शब्द गूंजने लगे।

"पूरा लट्ठमार गांव है रणधुरा। अवश्य ही वहां पहले एक-से-एक लठैत रहे होंगे। आज भी वह लठैतों का ही गांव है। वहां वाले तो भाई, कानून को लाठियों में समेटने वाले ठहरे।" पट्टी-पटवारी रुद्रदत्त ने जैसे लीलाधर को चेतावनी दी थी।

गांव में आकर सचमुच ही किसी ने उससे बात तक नहीं की थी। शिक्षा का महत्व जताता हुआ वह प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र के लिए गांव वालों से एक कमरे की मांग कर रहा था किन्तु कोई भी उसे स्थान नहीं दे पा रहा था। गांव वाले उल्टे उसी को बेवकूफ बनाने लगे।

"हूंह, कल का छोकरा हमें सिकिसा देने चला आया।" किसी बड़े-बूढ़े की हिकारत भरी टिप्पणी थी।

"काका, कहो तो इसे हमीं सिकिसा दे दें। ऐसी सिकिसा देंगे कि....." एक अधेड़ आयु वाले ने हाथ की लाठी को ठोकते-बजाते हुए कहा था।

"नहीं रे। सिरकारी आदमी है। गांव बंध जाएगा। न जाने क्या हो जाए। जगह नहीं मिलेगी तो अपने आप ही लौट जाएगा।" बुजुर्गवार ने उसे खबरदार किया था।

जिला मुख्यालय से लीलाधर को आदेश था कि यदि जगह न मिले तो वह स्थानीय विकास अधिकारी से तम्बू लेकर केन्द्र का संचालन करे।

सेमल-वृक्ष की जड़ से पीठ टिकाए हुए लीलाधर प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र पर विचार करने लगा। माना, वह उस लठैत गांव में तम्बू गाड़ भी ले किन्तु पढ़ेगा कौन। गांव वाले कहीं तम्बू को ही न उखाड़ बैठें। वह जितना ही इस सम्बन्ध में सोचता जाता, उतना ही उलझता भी जाता।

"कहो कैसे हो मास्टर ?" तभी वहां जग्गू सिंह आ पहुंचा। उसने सिर से गेहूं की बोरी को उतारकर एक ओर रखा और पेड़ की छांव में सुस्ताने लगा।

"ठीक है ठाकुर। न इस गांव में कोई जगह देगा न यहां शिक्षा-केन्द्र खुलेगा।" लीलाधर ठीक से बैठ गया।

"अरे छोड़ सिकिसा-केनदर को, ला कोई बीड़ी-सीड़ी है।" जग्गू सिंह ने माथे का पसीना पोंछते हुए कहा।

"मैं बीड़ी नहीं पीता ठाकुर।"

"बीड़ी नहीं पीता ?" जग्गू सिंह उसकी ओर आश्चर्य से देखने लगा।

लीलाधर अन्दर-ही-अन्दर जग्गूसिंह से घबड़ाने लगा। सारे रणधुरा गांव में उसे 'उकील-उकील' कहते हैं। जब से उसने जवानी में पांव रखा है, तब से वह मुकदमेबाजी ही करता आ रहा है। कचहरी से रणधुरा और रणधुरा से कचहरी के रास्ते में ही लोग उसे आते-जाते देखते हैं। पेशियां और गवाहियां भुगतते-भुगतते वह पक्का कानूनबाज बन गया है। अड़ोस-पड़ोस के गांव में भी वह 'उकील' (वकील) सैब के नाम से जाना जाता है।

"बीड़ी दमा कर देती है ठाकुर।" लीलाधर सहमता हुआ बोला।

"अच्छा हो मास्टर।" जग्गूसिंह ने कहा और सिर पर गेहूं की बोरी रखकर घर की ओर चल दिया।

उधर अपने घर की ओर जाता हुआ जग्गूसिंह अपने बारे में सोचने लगा। इसी वर्ष वह चालीस पूरे कर लेगा। पढ़ने-लिखने के नाम पर न कभी उसके बाप ने पढ़ा न उसने। सरकारी कागजातों पर दोनों ही अंगूठा छापते रहे हैं। किन्तु जग्गूसिंह अनपढ़ होते हुए भी रणधुरा गांव में बुद्धिमानों में से गिना जाता है। कई बार अपनी प्रशंसा वह स्वयं सुन चुका है। हाकिम के आगे क्रास-बयानों में वह बड़े-बड़े वकीलों को भी मात दे जाता है।

एक बार जग्गूसिंह ने एक नामी वकील को वह मात दी थी कि वकील साहब भरी कचहरी में माथे का पसीना पोंछने लगे थे।

मुन्सिफ में एक लूटपाट की सुनवाई हो रही थी। लूट के माल में चांदी की दो हंसुलियां भी थीं। दूसरे पक्ष का कहना था कि उन्होंने अपनी बहू के जेवर लिए थे और वे हंसुलियां लूटपाट की नहीं हैं। वकील साहब बार-बार इस बात पर जोर दे रहे थे कि यह लूटपाट का मामला नहीं है।

"लेकिन हजूर, एक औरत क्या एक साथ ही गले में दो-दो हंसुलिलां पहिना करती है ?" गवाह बने जग्गूसिंह ने मुन्सिफ की ओर देखकर कहा था।

इस पर मुन्सिफ चौंक पड़े थे। वे कुरसी से कुछ हिले भी। जग्गूसिंह के तर्क ने उन्हें सोचने पर मजबूर कर दिया। मामला करवट बदलने लगा। प्रतिपक्ष वालों को एक-एक साल की जेल हुई थी।

जग्गूसिंह को कचहरी के वकीलों के शब्दों की याद हो आती है।

"अगर दो दरजे भी पढ़ा होता तो पूरा बैरिस्टर बनता बैरिस्टर।" बाहर

कोई वकील उसकी बुद्धि चातुरी को देखकर कह उठा था।

"हां, भाई। पढ़े-लिखों के भी कान काट जाता है।" किसी दूसरे वकील ने कहा था।

जग्गूसिंह चबूतरे में दाड़िम की छांव में बैठा-बैठा हुक्का पी रहा था। अन्दर उसकी पत्नी दुपहर का खाना बना रही थी। उसे एकाएक लीलाधर मास्टर की याद हो आई।

"अरे ओ धनुवा।" उसने वहां से अपने बेटे को आवाज दी।

तभी मैले-कुचैले चीथड़ों से लिपटा हुआ जग्गू का लड़का चबूतरे पर आ खड़ा हुआ।

"जरा नीचे जाकर मास्टर सैब को तो बुला ला। सेमल के नीचे बैठे हैं।" जग्गूसिंह बोला।

मास्टर लीलाधर जब जग्गूसिंह के यहां आया तो वहां उसकी बड़ी आवभगत होने लगी। जग्गूसिंह ने उसके लिए चबूतरे पर दरी बिछा रखी थी। उसके इस बदले हुए व्यवहार पर लीलाधर को कुछ आश्चर्य ही हुआ।

"तम्बाकू तो नहीं लेते न मास्टर।" जग्गूसिंह पूछ बैठा।

"नहीं ठाकुर। बताया न कि मैं कोई नशा नहीं करता।"

"अच्छा, तुम जो यहां सिकिसा का परचार करोगे उससे क्या फैदा होगा?" जग्गूसिंह शिक्षा-प्रचार में रुचि लेता हुआ बोला।

"फायदे ही फायदे हैं ठाकुर। लोगों को कम से कम अपनी चिट्ठी-पत्री किसी गैर से तो नहीं बंचवानी पड़ेगी। और भी फायदे हैं।" मास्टर लीलाधर पढ़ने-लिखने के लाभ गिनाने लगा।

"आज तुम्हारा खाना यहीं रहेगा मास्टर।" कहकर जग्गूसिंह ने वहीं से अपने लड़के को आवाज दी "धनुवा, मास्टर सैब भी यहीं खाएंगे, अच्छा।"

जग्गूसिंह में आए इस बदलाव को देखकर लीलाधर को आश्चर्य ही हुआ। लगे हाथ वह विनम्रता से बोला "कहीं कोई कमरा दिलवा दो न ठाकुर।"

"भले काम के लिए कौन जगह नहीं देगा मास्टर?" जग्गूसिंह मुस्करा दिया।

जग्गूसिंह ने गांव के उत्तरी सिरे के पूरे मकान को ही शिक्षा-केन्द्र के लिए दे दिया।

रणधुरा गांव के दस-बीस अधेड़ प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र में साक्षर होने लगे। हाथ में खड़िया लिए लीलाधर ब्लैक-बोर्ड पर अक्षर बना-बना कर उन्हें समझाता रहता है। जग्गूसिंह ध्यानपूर्वक अक्षरज्ञान करने लगा। अक्षरों को मिला-मिलाकर वह शब्दों को भी पढ़ने लगा। उसे पढ़ने में इतनी रुचि हो आई थी कि हर समय वह लीलाधर से कुछ-न-कुछ पूछता ही रहता।

लीलाधर को रणधुरा गांव में छः महीने हो गए थे। इस बीच काफी लोग साक्षर हो चुके थे। अब वहां वाले अंगूठे के स्थान पर अपने हस्ताक्षर करने लगे हैं। पंचायत की बैठक में भी उपस्थिति-रजिस्टर पर अब कोई एक-आध ही अंगूठा टिकाता है। सबसे अधिक साक्षर जग्गूसिंह ही हुआ है। वह केन्द्र की प्रौढ़ पुस्तकों को पढ़ने लगा है। 'पंचायती राज अखबार' को भी वह अक्षर मिला-मिलाकर पढ़ने लगा है। इस प्रकार वह दो दरजे पढ़ लिख गया है।

जग्गूसिंह को पढ़ने का इतना चस्का लग गया है कि गांव में चंदा मांग-मांग कर वाचनालय बनाने लगा है। अब वह किसी भी दंगा-फंसाद में भाग नहीं लेता।

"सारी उमर ही साली मुकदमे बाजी में बीत गई।" कहकर वह मुकदमेबाजी से मुंह मोड़ लेता है।

कभी-कभी जग्गूसिंह खटिया पर पड़ा-पड़ा किसी पोथी को बांचने में ऐसा डूब जाता है कि उसे खेती-बाड़ी का भी ध्यान नहीं रहता। ऐसे में पत्नी ही उसका ध्यान बंटाती है।

जग्गूसिंह 'नीति और अनीति' के बारे में भी जानने लगा है। खेती बाड़ी के काम से निबट कर वह शिक्षा-केन्द्र में पोथियां पढ़ने लगता है।

अगले वर्ष गांव-पंचायत का चुनाव था। गांव की चौपाल में सारे रणधुरा वाले बैठे हुए थे। वहां हुक्का-चिलम चल रहा था। लोग सभापति के उम्मीदवार पर विचार कर रहे थे। तभी किसी ने इस पद के लिए जग्गूसिंह के नाम का प्रस्ताव कर दिया। कोई दूसरा उसका समर्थन कर देता है।

"कहो उकील सैब?" एक अधेड़-आयु का व्यक्ति जग्गूसिंह की इच्छा जानना चाहता है।

"हां भई, बनूंगा। दो दरजे पढ़ाई जो कर ली है।" जग्गूसिंह सभापति पद के लिए अपनी सहमति दे डालता है।

रणधुरा गांव पंचायत के चुनाव में जग्गूसिंह निर्विरोध सभापति चुन लिया गया। ... और, जग्गूसिंह को लगा जैसे यह सब कुछ दो दरजे तक पढ़ने लिखने के कारण ही हुआ है।

जी-66, म्यूनिस्पल कालोनी, ढक्का, किंग्सवे, दिल्ली-110009

पहला सुख निरोगी काया

ग्रीष्म ऋतु में 'लू' का प्रकोप और उससे बचने के उपाय

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की तेज किरणों के पड़ने से पृथ्वी का जलीयांश कम हो जाता है और दिनोंदिन उसकी गर्मी हवा में मिलकर लू का रूप धारण कर लेती है। प्रचण्ड ताप और झुलसाने वाली हवा के झोंके पथिकों के शरीर का जलीयांश सुखा देते हैं और परिणाम-स्वरूप शरीर में दाह पैदा हो जाती है। इससे हाथ-पैरों और आंखों में जलन होती है। शरीर के पोषक तत्व भी निष्क्रिय हो जाते हैं। इसी को देशी भाषा में 'लू' लगना कहते हैं। इसका प्रकोप अक्सर मई और जून में होता है। जो आदमी इस तेज धूप व हवा में बगैर जूते व चप्पल के आते जाते हैं वे इसके प्रकोप के जल्दी शिकार होते हैं। जिन जगहों पर गर्मी 108 डिग्री फारनहाइट से लेकर 120 डिग्री फारन-हाइट तक पहुंच जाती है वहां रात्रि में भी लू लग जाती है।

जब असह्य गर्मी शरीर की प्रति-रोधक क्षमता को नष्ट कर देती है तो खून गर्म होकर शरीर में पसीना का आना रुक जाता है तथा मस्तिष्क की रक्तवाहिनी शिराओं में फैलाव आ जाता है। तापमान शरीर में अत्याधिक बढ़ जाता है तथा बेचैनी और मूर्छा बढ़ने लगती है। शरीर से आग के शोले जैसे निकलते मालूम पड़ते हैं। हृदय, फेफड़े तथा मस्तिष्क सभी एक साथ संतप्त हो उठते हैं और ऐसी अवस्था में यदि समु-चित उपचार न हो तो रोगी काल का ग्रास बन जाता है। साधारण लू लगने से गले में खुश्की आने लगती है, जी मिचलाने लगता है और दर्द विशेष होता है। तापमान बहुत ज्यादा हो जाता है। बेचैनी बेहोशी हो जाती है तथा ऐंठन होने लगती हैं।

उपचार

सबसे पहले लू के रोगी को फौरन छायादार ठण्डी जगह में लिटाना चाहिए। उसके सब कपड़े हटा दें या ढीले कर दें। सिर पर ठण्डे जल की धारा डालें। मोटे कपड़े को पानी में भिगोकर उसके सारे शरीर को ढकें। बार-बार पोछें। अगर बर्फ उपलब्ध हो तो उसे सिर पर रखें और हथेली और पैरों के तलवों में खस के इत्र व चन्दन के तेल की मालिश करें। केवड़ा, खस, सन्तरा और मौसम्बी का रस भी पिलाएं। ग्लूकोस को पानी में डालकर पिलाते रहें। आम का पन्ना, सोंफ का अर्क, पोदीने का रस मिलाकर पिलाने से शीघ्र आराम होता है। प्रबालपिष्टी को खस और चन्दन के शर्बत में डालकर पिलाना अति सुखदायक है तथा नीबू और बेल का शर्बत भी हितकर है। यदि इनमें बर्फ डाल कर पिलाया जाए तो अधिक लाभकर होगा।

सावधानियां

1. ज्यादातर तेज धूप में नहीं डोलना चाहिए। अगर जाना भी पड़े तो सिर तथा कानों को अंगोछा या मोटे तौलिये से बांधकर बाहर निकलें।

2. इमली का शर्बत बनाकर पीने से भी लू में फौरन लाभ होता है।

3. खाली पेट तथा बिना पानी पिए धूप में नहीं निकलना चाहिए। हमेशा थोड़े-थोड़े समय के बाद पानी पेट भरके पीना चाहिए तथा कुछ खा-पीकर ही बाहर जाएं।

4. प्याज का अर्क, पोदीना का अर्क, अमृतधारा मिलाकर पीने से लू का असर फौरन दूर होता है। नंगे पैर तथा नंगे सिर नहीं डोलना चाहिए।

लू लगने के समय से 3 दिन तक चाय, काफी आदि अन्यान्य गर्म चीजों का सेवन न करें।

□

राजवैद्य श्रीधर शर्मा
पुरोहित मोहल्ला
भरतपुर

पुरस्कृत पंचायतें

महाराष्ट्र के यावल तालुका की वीरावली ग्राम पंचायत को 1972-73 की सर्वोत्तम ग्राम पंचायत होने के उपलक्ष में 5 हजार रु० का प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया है। तीन हजार रु० का द्वितीय पुरस्कार उत्तर प्रदेश के देहरादून जिले की कलसी ग्राम पंचायत को दिया गया है।

केन्द्र के समाचार

उर्वरक उत्पादन बढ़ा

1973-74 में सरकारी कारखानों में उर्वरक उत्पादन 5,34,000 टन हुआ जो 1972-73 के 4,93,000 टन के उत्पादन से आठ फीसदी अधिक था। निजी क्षेत्र के कारखानों में 5,26,000 टन उर्वरक का उत्पादन हुआ, जबकि पिछले साल 5,67,000 टन उर्वरक बना था।

रेगिस्तान कार्यक्रम

केन्द्रीय कृषि कमीशन ने राजस्थान, हरियाणा और गुजरात के लिए 15-साला रेगिस्तान विकास कार्यक्रम पर 423 करोड़ रु० खर्च करने का सुझाव दिया है। कमीशन ने कहा कि रेगिस्तान को रोकने के लिए पेड़ लगाए जाएं, रक्षा पट्टियों का विकास किया जाए और रेतीले इलाकों को वनस्पतियों से ढक दिया जाए।

मक्का के लिए जस्ता जरूरी

भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् के प्रयोगों से पता चला है कि संकर मक्का गंगा-5 की अधिकतम उपज के लिए खेत में जस्ता 'जिंक सल्फेट' के रूप में देना जरूरी है। प्रयोगों में उर्वरकों को पोर कर और जस्ते को बुवाई के समय पोर कर देने पर सबसे अधिक उपज (28.30 मन की एकड़) मिली। जस्ते के अलावा फी एकड़ 50 किलोग्राम नत्रजन, 25 किलोग्राम फास्फोरस और 25 किलोग्राम पोटाश दिया गया। जिंक सल्फेट फी एकड़ 10-20 किलोग्राम दिया गया।

किसान जस्ता खेत में फास्फोरस और पोटाशधारी उर्वरकों के साथ न डालें, बल्कि अलग से डालें। साथ डालने से पौधों को फास्फोरस की पूरी मात्रा नहीं मिलेगी।

विकलांगों को रोजगार

विकलांगों को विशेष सहायता उपलब्ध कराने के लिए देश में 11 विशेष रोजगार दफ्तर खोले गए हैं। जनवरी-दिसम्बर, 1973 की अवधि में 1,379 विकलांगों को रोजगार दिलाया गया। इनमें से 42 अंधे, और 85 बहरे-गूंगे थे।

31 दिसम्बर, 1973 को रोजगार चाहने वाले विकलांगों की कुल संख्या 10,319 थी।

विकलांगों के लिए विशेष रोजगार दफ्तर बंगलौर, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, चण्डीगढ़, दिल्ली, हैदराबाद, कानपुर, त्रिवेन्द्रम और जबलपुर में हैं। इसके अतिरिक्त हैदराबाद, दिल्ली, बम्बई, जबलपुर, लुधियाना और कानपुर में विकलांगो को प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

सरकार ने सरकारी नौकरियों के लिए रोजगार दफ्तरों में नामांकित विकलांग व्यक्तियों को तृतीय प्राथमिकता प्रदान कर दी है।

उर्वरकों के भाव

भारत सरकार ने तीन प्रमुख नाइट्रोजन युक्त उर्वरकों के अधिकतम थोक मूल्यों की घोषणा कर दी है। ये मूल्य इस प्रकार होंगे :—

यूरिया (45 प्रतिशत नाइट्रोजन)—1,960 रु० प्रति टन, यूरिया (46 प्रतिशत नाइट्रोजन) —2,000 रु० प्रति टन, अमोनियम सल्फेट (21 प्रतिशत नाइट्रोजन)—935 रु० प्रति टन (50 किलोग्राम के थैलों में) और 925 रु० प्रति टन (100 किलोग्राम के थैलों में), कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट—1,095 रु० प्रति टन (25 प्रतिशत नाइट्रोजन सहित) और 1,145 रु० प्रति टन (26 प्रतिशत नाइट्रोजन सहित)।

ये मूल्य बिक्री कर और अन्य स्थानीय करों को छोड़कर हैं। इन मूल्यों से अधिक मूल्य पर उर्वरक बेचना अपराध होगा।

मूंगफली के उत्पादन में वृद्धि के प्रयत्न

पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान तिलहन का उत्पादन बढ़ाने के लिए 1967 में शुरू की गई अखिल भारतीय समन्वित अनुसन्धान परियोजना का विस्तार किया जाएगा।

इस परियोजना के लिए देश के विभिन्न स्थानों में 19 केन्द्र और 30 उपकेन्द्र हैं। इनमें से 22 केन्द्र और उपकेन्द्र मूंगफली सम्बन्धी अनुसन्धान-कार्य से सम्बन्धित हैं।

चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान तिलहन के अनुसन्धान के लिए कुल 165 लाख रुपये की पूंजी लगाई गई थी।

इस समन्वित परियोजना की मुख्य विशेषताएं हैं :—

मूंगफली की फसल में सुधार करना, फसल की देखभाल के उन्नत तरीके अपनाना, पौधों की सुरक्षा करना और उन्हें खराब मौसम से बचाना।

चूंकि देश की अधिकांश खाद्य तेल अर्थ-व्यवस्था मूंगफली पर आधारित है, इसलिए तिलहनों के अनुसन्धान पर काफी जोर दिया गया है।

□

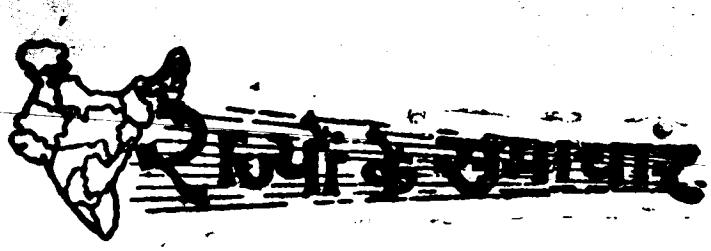

उत्तर प्रदेश

धान की उपज

उत्तर प्रदेश कृषि विज्ञान संस्थान के फैजाबाद चावल अनुसन्धान स्टेशन के अध्ययनों से पता चला है कि बारानी क्षेत्रों में फी एकड़ 16 क्विण्टल धान की उपज लेना कल्पना नहीं है। कावेरी, बाला, पूसा 2-21 और पद्मा की खेती बारानी क्षेत्रों में काफी लाभकारी पाई गई है।

गेहूं वसूली का लक्ष्य

राज्य सरकार की योजनानुसार बाराबंकी जनपद से 29 हजार क्विण्टल गेहूं प्राप्त करने का लक्ष्य निश्चित हुआ है। जनपद को 32 केन्द्रों में बिभाजित कर दिया गया है। चारों तहसीलों के अधिकारी और परगना अधिकारी गेहूं वसूली की देख-रेख करेंगे। प्रत्येक लेखपाल को कम से कम एक सौ क्विण्टल गेहूं अपने क्षेत्र से जमा कराना होगा। गेहूं की खरीदारी गल्ला व्यापारियों और उत्तर प्रदेश सहकारी संघ के द्वारा की जाएगी। कृषकों को गल्ला केन्द्र पर लाने के लिए बहुत सी सुविधाएं प्रदान की जा रही हैं। केन्द्र पर कीमत का भुगतान तुरन्त नकद किया जाएगा। कृषकों की आवश्यकता की वस्तुएं—चीनी, डालडा, सीमेंट, यूरिया खाद, डीजल, मिट्टी का तेल, सस्ता कपड़ा आदि के परमिट भी दिए जाएंगे। इन परमिटों पर वस्तुएं केन्द्र पर ही देने की व्यवस्था की जा रही है। परमिट गेहूं की प्राप्ति संख्या के आधार पर दिए जाएंगे।

जल-सम्पूर्ति और जल-निकासी योजनाएं

वृहद् योजना के अन्तर्गत आगरा नगर को जल सम्पूर्ति के लिए 14 क्षेत्रों और जल निकासी के लिए सात क्षेत्रों में विभक्त किया गया है। प्रत्येक क्षेत्र में जल एकत्रित करने और उसके वितरण की व्यवस्था रहेगी। जल निकासी प्रणाली परियोजना में प्रथम और द्वितीय चरण की मशीनों के बाद गन्दे पानी को 700 एकड़ के एक सीवेज फार्म में डाला जाएगा।

सम्पूर्ण जल निकासी परियोजना को 1985-86 तक पूरी करने का प्रस्ताव है और इसकी रूपरेखा ऐसी बनाई जा रही है कि सन् 2001 तक आगरा की बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता पूर्ति कर सके।

परियोजना के दो चरणों में 40,000 शुष्क शौचालयों को सैनीटरी शौचालयों में परिवर्तित करने का प्रस्ताव है ताकि नगर अधिक स्वच्छ रह सके।

दिल्ली

प्रौढ़ शिक्षा योजना

दिल्ली में प्रौढ़ शिक्षा के प्रसार में तेजी लाने के लिए दिल्ली प्रशासन व दिल्ली प्रौढ़ शिक्षा संघ एक व्यापक योजना पर अमल की तैयारी में हैं। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों, पिछले इलाकों तथा गन्दी बस्तियों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। प्रौढ़ शिक्षा के प्रचार के लिए शिक्षकों तथा समाजसेवियों, विशेषकर शिक्षित महिलाओं का सहयोग प्राप्त किया जाएगा।

दिल्ली प्रौढ़ शिक्षा संघ के पांचवें वार्षिक अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए मुख्य कार्यकारी पार्षद श्री राधारमण ने कहा कि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कई स्कूल खोले गए हैं व कुछ अन्य खोले जा रहे हैं। अधिवेशन में दो-दिवसीय गोष्ठी का भी आयोजन किया गया है।

मध्य प्रदेश

आदिवासी क्षेत्रों का विकास

प्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में एकीकृत आर्थिक विकास के लिए पांचवीं योजना की अवधि में 35 क्षेत्रीय विकास परियोजनाएं तथा दस लघु क्षेत्रीय विकास परियोजनाएं प्रारम्भ की जाएंगी। इन परियोजनाओं के लिए भारत सरकार ने धनराशि देना स्वीकार कर लिया है। वर्तमान वर्ष में अंबिकापुर, बीजापुर, लखनादोन, पुष्पराजगढ़ तथा झाबुआ में पांच क्षेत्रीय विकास परियोजनाएं प्रारम्भ की जाएंगी जिसके लिए राज्य शासन ने इस वर्ष के बजट में एक करोड़ रु० का प्रावधान किया है।

गेहूं खरीद अभियान

राज्य के विभिन्न जिलों में गेहूं की खरीदी में और अधिक प्रगति हुई है। विदिशा जिले में निर्धारित लक्ष्य का 42 प्रतिशत से अधिक गेहूं संग्रहीत हो चुका है। भोपाल जिले में अभी तक कृषकों से 11 हजार क्विण्टल गेहूं खरीदा गया है। रतलाम जिले में 5 हजार क्विण्टल, पूर्व निमाड़ जिले में 10,225 क्विण्टल, दमोह जिले में 6,500 क्विण्टल, पश्चिम निमाड़ जिले में 10,308 क्विण्टल, शाजापुर में 12,460 क्विण्टल, मंदसौर में 3,500 क्विण्टल तथा ग्वालियर में अभी तक 2,000 क्विण्टल गेहूं खरीदा गया है।

निर्माण कार्य

मध्य प्रदेश गृह निर्माण मण्डल इस वित्तीय वर्ष में

598.88 लाख रु० के निर्माण कार्य विभिन्न नगरों में आरम्भ करेगा। ये निर्माण कार्य हड़को (केन्द्रीय शहरी आवास विकास निगम) से प्राप्त धनराशि से किए जाएंगे। इस योजना के अन्तर्गत मण्डल भोपाल में 169 आवास गृहों का निर्माण कर रहा है जिसकी लागत 40.20 लाख रु० है। इसी योजना के अन्तर्गत भोपाल में ही मण्डल द्वारा 171.90 लाख रु० व्यय से 1,011 आवासगृह जवाहर चौक टी० टी० नगर में बनाए जाएंगे। हड़को योजना के अन्तर्गत ही ग्वालियर में 36.40 लाख, रु० इन्दौर में 68.44 लाख रु० तथा जबलपुर में 44 लाख रु० के आवासगृह बनाए जा रहे हैं। भिलाई में 1,132 आवासगृहों के निर्माण कार्य पर 215.50 लाख रु० अनुमानित हैं। इसके साथ ही होशंगाबाद में बाढ़ पीड़ितों के लिए मण्डल द्वारा 22.40 लाख रु० के व्यय से आवासगृह निर्मित किए जा रहे हैं।

शिक्षित बेरोजगार योजना

मध्य प्रदेश कृषि उद्योग विकास निगम द्वारा संचालित तीन शिक्षित बेरोजगार योजनाओं के अन्तर्गत राज्य में 196 शिक्षित बेरोजगार प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। इन योजनाओं के अन्तर्गत राज्य में 2,400 शिक्षित बेरोजगारों को प्रशिक्षण के उपरान्त उनके द्वारा प्रस्तुत की गई योजना की स्वीकृति पर राष्ट्रीयकृत बैंकों एवं मध्य प्रदेश शासन से ऋण प्राप्त कराने का प्रावधान है।

सिंचाई पम्पों के लिए ऋण

राज्य सरकार विद्युत तथा डीजल पम्प लगाने के लिए हरिजन तथा आदिवासी काश्तकारों को ऋण देने की योजना को वर्ष 1974-75 में चालू रखने की स्वीकृति दी है। इस योजना के अन्तर्गत विद्युत तथा डीजल पम्पों की खरीद हेतु 1974-75 में इन कृषकों में वितरण के लिए क्रमशः 23.50 लाख रु० तथा 3.52 लाख रु० निर्धारित किए गए हैं। ये ऋण कृषि विभागीय अभिकरण द्वारा दिए जाएंगे।

राजस्थान

जलप्रदाय योजनाएं

राज्य में पांचवीं पंचवर्षीय योजना में शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल उपलब्ध कराने में तीन गुना से भी अधिक व्यय किया जाएगा।

चौथी योजना में शहरों में पेयजल के लिए कुल 24 करोड़ 83 लाख 36 हजार रु० व्यय किया गया जबकि ग्रामों में इस अवधि में 26 करोड़ 25 लाख 30 हजार रु० व्यय किया गया है। पांचवीं योजना में गांवों के लिए 58 करोड़ रु० पेयजल उपलब्ध कराने पर व्यय करने का प्रावधान किया गया है।

नियमित मण्डियां

राज्य की नियमित मण्डियों में फरवरी 1974 में 20.23 करोड़ रु० के मूल्य की 9.62 लाख क्विण्टल कृषि उपज का क्रय-विक्रय हुआ। इससे मण्डी में अपनी उपज लेकर आने वालों को 51.36 लाख रु० की बचत होने का अनुमान है।

कृषि उपज मण्डी समितियों के पास अब 1.89 करोड़ रुपये की राशि एकत्रित हो गई है और वे अपने यहां विभिन्न प्रकार के विकास कार्यक्रम हाथ में लेने पर विचार कर रही है।

जोधपुर, शिवगंज तथा सुमेरपुर की मण्डियों के विकास के लिए एक लाख रुपये का केन्द्रीय अनुदान प्राप्त हुआ है।

डेयरी संयन्त्र

बीकानेर जिले में दुग्ध उत्पादन एवं डेयरी के विकास के लिए एक योजना तैयार की गई है जिसके अन्तर्गत 148 लाख रु० की लागत से एक डेयरी संयन्त्र लगाया जाएगा। भारतीय डेयरी निगम द्वारा आपरेशन फ्लड कार्यक्रम के अन्तर्गत इसके लिए 140 लाख रु० की स्वीकृति दी जा चुकी है।

इस योजना के अन्तर्गत ग्रामों में दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां स्थापित कर दुग्ध एकत्रित करना तथा बीकानेर में एक लाख लिटर प्रतिदिन क्षमता वाला फीडर बेलेंसिंग डेयरी संयन्त्र लगाना है। दुग्ध संग्रह कार्यक्रम के साथ-साथ दुग्ध उत्पादन में वृद्धि का कार्यक्रम भी इस योजना के अन्तर्गत हाथ में लिया जाएगा। कार्यक्रम के अन्तर्गत पशुओं के लिए आहार की व्यवस्था, पशु प्राथमिक चिकित्सा की व्यवस्था एवं कृत्रिम गर्भाधान का कार्य हाथ में लिया जाना है।

हरियाणा

छोटी बचतों में बच्चों का योग

जिला कुरुक्षेत्र के सीवन राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के बच्चों ने छोटी योजना में जिला में सबसे अधिक अर्थात् 79,400 रुपये जमा करके दूसरी बार फिर शील्ड जीत ली है। छोटी बचत योजना में जिला कुरुक्षेत्र के विविध स्कूलों के 36,228 विद्यार्थियों ने भाग लेकर 2,00,000 से भी अधिक रुपये इस योजना में लगाए हैं।

पेयजल एवं मल निकास सुविधाएं

राज्य सरकार ने वर्ष 1973-74 के दौरान राज्य के 154 गांवों में पेयजल सुविधाएं पहुंचाने का लक्ष्य निर्धारित किया था, इनमें से 25 फरवरी, 1974 तक राज्य के 98 गांवों में यह सुविधाएं प्रदान की जा चुकी थीं। राज्य में अम्बाला छावनी, जगाधरी वर्कशाप तथा पिंजौर में एच० एम० टी० क्षेत्र को छोड़कर 66 नगर हैं। इनमें से 31 मार्च, 1973 तक 57 नगरों में जल वितरण किया, 22 नगरों में निकास नालियों की आंशिक सुविधाएं उपलब्ध थी। सरकार ने वर्ष 1973-74 के दौरान 7 नगरों में आंशिक जल वितरण तथा 3 नगरों में मल निकास की सुविधाएं प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया था। 25 फरवरी, 1974 तक राज्य के 59 नगरों में आंशिक जल वितरण व 23 नगरों में मल निकास की सुविधाएं प्रदान की जा चुकी हैं।

सोने सी फसल को चाहिए सोने सी सुरक्षा

भण्डारणगृह करता है इसकी व्यवस्था

देश की खाद्यान्न समस्या का हल उत्पादन की प्रचुरता ही नहीं अपितु उत्पादन की समुचित सुरक्षा से भी सम्बन्ध रखता है। इस हेतु वैज्ञानिक ढंग से निर्मित और व्यवस्थित भण्डारगृहों की देशव्यापी श्रृंखला भी अनिवार्य हो जाती है। देश के अन्य राज्यों की भांति मध्यप्रदेश में भी भण्डारगृह योजना क्रियान्वित की जा रही है।

देश में भण्डारगृह योजना का सूत्र-पात सन् 1956 में संसद् द्वारा कृषि उत्पादन (विकास एवं भण्डारण) निगम अधिनियम के पारित किए जाने के साथ हुआ। अधिनियम में यह प्रावधान किया गया कि देश में केन्द्रीय एवं राजकीय भण्डारगृह निगमों की स्थापना की जाए। मध्यप्रदेश में उक्त अधिनियम के अन्तर्गत राज्य शासन द्वारा फरवरी 1958 में मध्यप्रदेश राज्य भण्डारगृह निगम की स्थापना की गई। निगम का प्रधान कार्यालय इन्दौर में रखा गया।

भण्डारगृह योजना का मूलभूत उद्देश्य यह है कि देश में वैज्ञानिक भण्डारण सुविधाओं का प्रसार हो और चूहों, कीड़ों तथा मौसम के प्रभाव आदि से अनाज और अन्य सामान की जो क्षति होती है एवं सामग्री में गुणात्मक गिरावट की स्थिति पैदा हो जाती है, उसे रोका जा सके। साथ ही, यह भी लक्ष्य है कि देश में भण्डारण की व्यवस्था के साथ एक ऐसी साख व्यवस्था का निर्माण हो सके जिसके द्वारा जमाकर्त्ता को भण्डा-रगृह में जमा किए गए माल की प्रतिभूति पर बैंकों से आवश्यक धनराशि प्राप्त हो सके। इससे जमाकर्त्ता को साख सुविधा के अभाव में अपना माल गिरे हुए भावों पर बेचने की विवशता से भी छुटकारा मिल जाता है। भण्डारगह योजना का क्रियान्वयन इस प्रकार वैज्ञा-निक भण्डारण एवं सुसंगठित साख व्यवस्था के प्रबन्ध एवं प्रसार में सहायक हो रहा है।

राज्य भण्डारगृह निगम प्रदेश में उपयुक्त स्थानों पर वैज्ञानिक विधि से गोदामों के निर्माण करने तथा गोदाम प्राप्त करने का कार्य कर रहा है। कृषि-उपजों, बीज, खाद आदि के लिए इसके द्वारा भण्डारगृह केन्द्र स्थापित किए जा रहे हैं एवं इसके लिए आवश्यक परिवहन सुविधाओं की व्यवस्था करने की ओर ध्यान दिया जा रहा है। कृषि उपजों एवं अन्य वस्तुओं के लिए भण्डार-गृह के बाहर कीटनाशक सेवाएं भी दी जा रही हैं।

प्रदेश में भण्डारगृह योजना 1968 में आठ प्रमुख मण्डी केन्द्रों पर भण्डारगृह केन्द्र की स्थापना से प्रारम्भ हुई। इन केन्द्रों की संख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि होती गई और वर्तमान में इनकी संख्या 105 है। प्रारम्भ में भण्डारगृह योजना उपयुक्त ढंग के किराए पर लिए गए गोदामों में चालू की गई। बाद में निगम ने अनेक मण्डी केन्द्रों पर वैज्ञानिक ढंग के गोदामों के निर्माण का कार्य हाथ में लिया। वर्तमान में भण्डारगृह निगम के पास कुल 2,16,028 मीट्रिक टन की क्षमता के गोदाम भण्डारगृह हेतु उपलब्ध हैं। इनमें से 62,166 मीट्रिक टन वैज्ञानिक भण्डारण क्षमता निगम के स्वनिर्मित गोदामों की है।

राज्य भण्डारगृह निगम ने वैज्ञानिक ढंग के गोदाम क्रय करने और बनाने की योजना यद्यपि 1960-61 में प्रारम्भ की लेकिन 1971-72 एवं 1972-73 में विशाल पैमाने पर गोदाम बनाने का कार्य

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1
द्वारा प्रकाशित तथा केसर क्यारी इलैक्ट्रिक प्रेस, लाइब्रेरी रोड, दिल्ली-6 द्वारा मुद्रित।

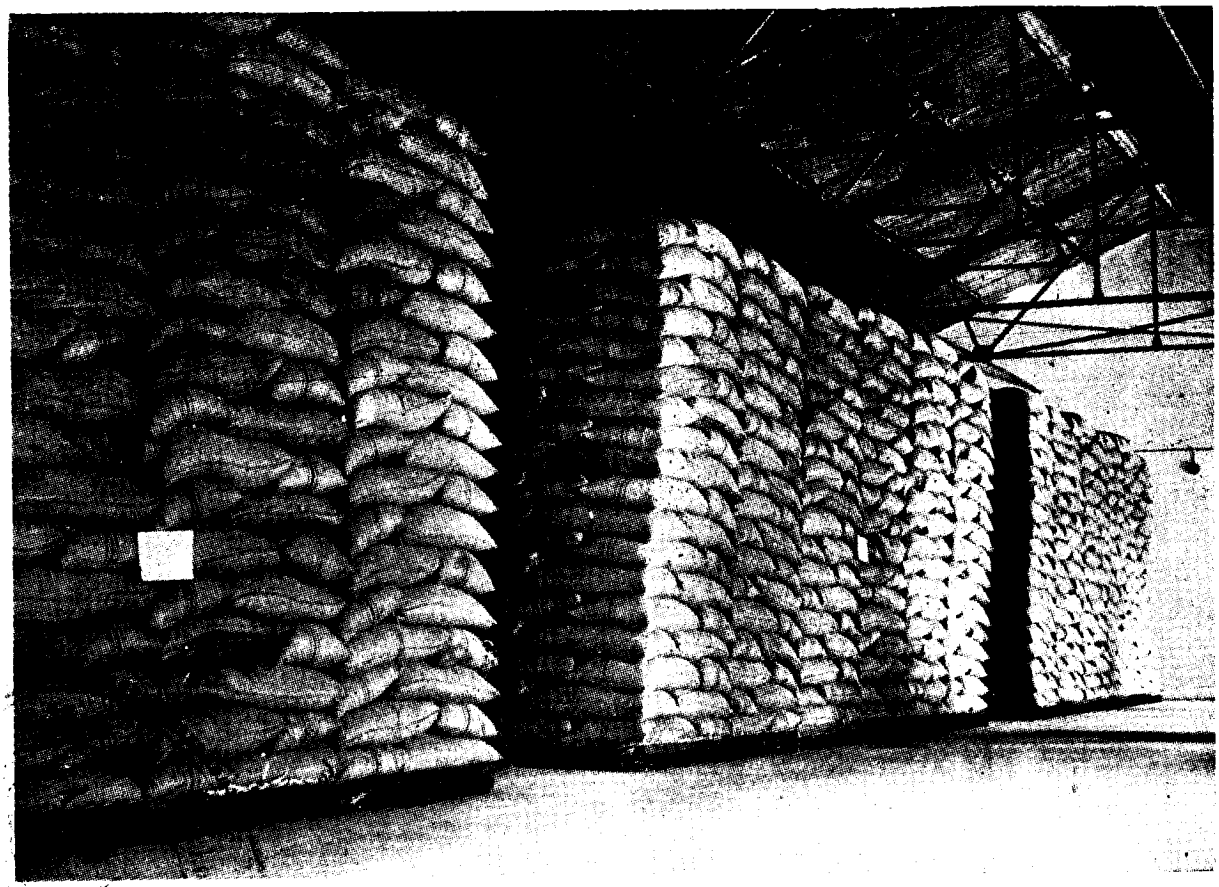

चित्र : भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्

हाथ में लिया गया और इन दो वर्षों में 38,020 मीट्रिक टन क्षमता के गोदामों के निर्माण का लक्ष्य पूरा किया गया। इस समय गोदाम निर्माण की सामान्य योजना के अतिरिक्त भारत शासन की ग्रामीण बेकारी उन्मूलन योजना के अन्तर्गत भी एक-एक हजार मीट्रिक टन क्षमता के गोदाम बनाए जा रहे हैं। पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान एक लाख मीट्रिक टन क्षमता के गोदाम 39 स्थानों पर बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

मध्यप्रदेश राज्य भण्डारगृह निगम की अधिकृत अंश पूंजी 2 करोड़ रु० की है। इसके अतिरिक्त, राज्य शासन ने मार्च, 1972 में गोदाम निर्माण हेतु 16 लाख रु० का ऋण निगम को दिया है। प्रारम्भिक वर्षों की हानि की स्थिति के बाद 1965-66 से भण्डारगृह निगम लाभ में चल रहा है और 1968-69 तक उसने हानि की पूर्ति कर ली है।

इन पन्द्रह वर्षों के कार्यकाल में भण्डारगृह निगम की सुविधाओं का लाभ किसानों, व्यापारियों, सहकारी संस्थाओं तथा अन्य गैरसरकारी, अर्धशासकीय एवं सरकारी संस्थाओं ने उठाया है। 1968 से भण्डारण की सुविधाओं के अतिरिक्त माल लाने ले जाने और उसकी सारसम्भार तथा वितरण की सुविधाएं उपलब्ध कराने का कार्य भी निगम ने प्रारम्भ किया है। साथ ही 1972 से कीटनाशक विस्तार सेवाएं भी प्रारम्भ की गई हैं। यह अनुमान है कि केवल गलत भण्डारण के कारण ही प्रति वर्ष अनुमानतः 10 प्रतिशत खाद्यान्न एवं अन्य माल नष्ट या क्षतिग्रस्त होता रहा है। इस विशाल क्षति को रोकने के लिए भण्डारगृह निगम द्वारा जो प्रयास किए जा रहे हैं, उनसे कृषि उत्पादकों को आर्थिक लाभ के अतिरिक्त खाद्यान्न संकट से मुक्ति की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है।

□